निवेदन

मुमुक्षु बंधुओमां आ नित्यक्रम ([illegible]) ग्रन्थनी उपयोगिता तथा आवश्यकता जणानाथी आ प्रकाशन मुमुक्षुओना करकमळमां मूकवामां आवे छे.

आ ग्रन्थना प्रकाशनमां आहोरना श्री फूलचन्दजी छोगालालजीनां धर्मपत्नी श्री मोतीबेन तरफथी रु ५०१ नी आर्थिक मदद मळी छे ते माटे तेमनो आभार मानवामां आवे छे.

सत्पदाभिलाषी सज्जनोने सत्पदनी आराधनामां आ ग्रन्थनो विनय अने विवेकपूर्वक सदुपयोग आत्मश्रेय साधवामां प्रबळ सहायक बनो एज अभ्यर्थना.

श्रीमद् राजचन्द्र (राज) मंदिर
आहोर (राजस्थान)
स्टेशन एरनपुरा रोड
ता. २२-३-५८

संतसेवक
चूनीलाल मघराज सिंघि.
आहोर.

क्रमांक	विषय	पृष्ठ

★

२. प्रातःकाळनी भावनानां पदो.

तीन भुवन चूडा रतन, सम श्री जिनके पाय।
नमत पाइये आप पद, सब विधि बंध नशाय.
आस्रव भाव अभावतें, भये स्वभाव स्वरूप;
नमो सहज आनंदमय, अचलित अमल अनूप.
करी अभाव भवभाव सब, सहज भाव निज पाय;
जय अपुनर्भव भावमय, भये परम शिवराय.
करी शांति के अर्थी जिन, नमो शांति करतार;
प्रशमित दुरित समूह सब, महावीर जिन सार.
ज्ञान ध्यान वैराग्यमय, उत्तम जहां विचार;
ए भावे शुभ भावना, ते उतरे भव पार.

—त्रण मंत्रनी माळा—

सहजात्म स्वरूप परम गुरु.

आतम भावना भावतां जीव लहे केवळज्ञानरे.

परमगुरु निर्ग्रंथ सर्वज्ञदेव.

त्यां आव्यो रे उदय कारमो,
परिग्रह कार्य प्रपंच रे;
जेम जेम ते हडसेलीअे,
तेम वधे न घटे अेक रंच रे. धन्य० ४

वधतुं अेम ज चालियुं,
हवे दीसे क्षीण कांई रे;
क्रमे करीने रे ते जशे,
अेम भासे मनमांहि रे. धन्य० ५

यथा हेतु जे चित्तनो,
सत्य धर्मनो उद्धार रे;
थशे अवश्य आ देहथी,
अेम थयो निर्धार रे. धन्य० ६

आवी अपूर्व वृत्ति अहो,
थशे अप्रमत्त योग रे;
केवल लगभग भूमिका,
स्पर्शीने देहवियोग रे. धन्य० ७

त्यां आव्यो रे उदय कारमो,
परिग्रह कार्य प्रपंच रे;
जेम जेम ते हडसेलीओ,
तेम वधे न घटे ओक रंच रे. धन्य० ४

वधतुं ओम ज चालियुं,
हवे दीसे क्षीण कांई रे;
क्रमे करीने रे ते जशे,
ओम भासे मनमांहि रे. धन्य० ५

यथा हेतु जे चित्तनो,
सत्य धर्मनो उद्धार रे;
थशे अवश्य आ देहथी,
ओम थयो निर्धार रे. धन्य० ६

आवी अपूर्व वृत्ति अहो,
थशे अप्रमत्त योग रे;
केवल लगभग भूमिका,
स्पर्शीने देहवियोग रे. धन्य० ७

हे प्रभु! हे प्रभु! शुं कहुं, दीनानाथ दयाळ;
हुं तो दोष अनंतनुं, भाजन छुं करुणाळ. १

शुद्ध भाव मुजमां नथी, नथी सर्व तुज रूप;
नथी लघुता के दीनता, शुं कहुं परम स्वरूप? २

नथी आज्ञा गुरुदेवनी, अचळ करी उरमांहि;
आपतणो विश्वास दृढ, ने परमादर नांहि. ३

जोग नथी सत्संगनो, नथी सत्सेवा जोग;
केवळ अर्पणता नथी, नथी आश्रय अनुयोग. ४

'हुं पामर शुं करी शकुं,' अेवो नथी विवेक;
चरण शरण धीरज नथी, मरण सुधीनी छेक. ५

अचिंत्य तुज माहात्म्यनो, नथी प्रफुल्लित भाव;
अंश न अेके स्नेहनो, न मळे परम प्रभाव. ६

अचळरूप आसक्ति नहि, नहि विरहनो ताप;
कथा अलभ्य तुज प्रेमनी, नहि तेनो परिताप. ७

भक्तिमार्ग प्रवेश नहि, नहि भजन दृढ भान;
समज नहि निजधर्मनी, नहि शुभ देशे स्थान. ८

काळदोष कळिथी थयो, नहि मर्यादा धर्म;
तोय नहि व्याकुळता, जुओ प्रभु मुज कर्म. ९

८. आलोचना पाठ.

दोहा.

वंदो पांचों परमगुरु, चौविसौं जिनराज;
कहूं शुद्ध आलोचना, शुद्धि करनके काज. १

सखी छंद (१४ मात्रा)

सुनिये जिन अरज हमारी, हम दोष किये अति भारी;
तिनकी अब निवृत्ति काजा, तुम शरन लही जिनराजा. २

ईक बे ते चउ इन्द्री वा, मन-रहित-सहित जे जीवा;
तिनकी नहि करुना धारी, निरदई व्है घात विचारी. ३

समरंभ समारंभ आरंभ, मन वच तन कीने प्रारंभ;
कृत कारित मोदन करिकैं, क्रोधादि चतुष्टय धरिकैं. ४

शत आठ जु ईम भेदनतैं, अघ कीने पर छेदनतैं;
तिनकी कहुं कोलौं कहानी, तुम जानत केवलज्ञानी. ५

विपरीत अेकांत विनयके, संशय अज्ञान कुनयके;
वश होय घोर अघ कीने, वचतैं नहि जात कहीने. ६

कुगुरुनकी सेव जु कीनी, केवल अदयाकर भीनी;
या विधि मिथ्यात भ्रमायो, चहुंगतिमधि दोष उपायो. ७

हिंसा पुनि जूठ जु चोरी, परवनितासों दृग जोरी;
आरंभ परिग्रह भीनो, पनपाप जु या विधि कीनो. ८

सपरस रसना घ्राननको, चख कान विषय सेवनको;
बहु करम किये मनमाने, कछु न्याय अन्याय न जाने. ९

क्रोध मान मद लोभ मोह मायावश प्रानी,
दुःखसहित जे किये दया तिनकी नहिं आनी;
विना प्रयोजन अेकइन्द्रि वि ति चउ पंचेंद्रिय,
आप प्रसादहिं मिटे दोष जो लग्यो मोहि जिय. ३

आपसमें इक ठोर थापिकरी जे दुःख दीने,
पेलि दिये पगतलें दाबिकरी प्राण हरीने;
आप जगतके जीव जीते तिन सबके नायक,
अरज करुं मैं सुनो दोष मेटो दुःखदायक. ४

अंजन आदिक चोर महा घनघोर पापमय,
तिनके जे अपराध भये ते क्षमा क्षमा किय;
मेरे जे अब दोष भये ते क्षमहु दयानिधि,
यह पडिकोंणों कियो आदि षट्कर्ममांहिं विधि. ५

२ प्रत्याख्यान कर्म.

जो प्रमाद वश होइ विराधे जीव घनेरे,
तिनको जो अपराध भयो मेरे अघ ढेरे;
सो सब जूठो होहु जगतपतिके परसादै,
जा प्रसादतैं मिले सर्व सुख दुःख न लाधैं. ६

मैं पापी निर्लज्ज दयाकरि हीन महाशठ,
किये पाप अति घोर पापमति होय चित्त दुठ;
निंदूं हूं मैं बारबार निज जियको गरहूं,
सब विधि धर्म उपाय पाय फिरि पापहि करहूं. ७

दुर्लभ हैं नरजन्म तथा श्रावककुल भारी,
सत्संगति-संयोग धर्म जिन श्रद्धा धारी;

मेरो है इक आतम तामैं ममत जु कीनो,
और सबै मम भिन्न जानि समतारस भीनो;
मात पिता सुत बंधु मित्र तिय आदि सबै यह,
मोतैं न्यारे जानि यथारथ रूप कर्यो गह. १४

मैं अनादि जगजालमांहिं फँसि रूप न जाण्यो,
अेकेंद्रिय दे आदि जंतुको प्राण हराण्यो;
ते अब जीवसमूह सुनो मेरी यह अरजी,
भवभवको अपराध क्षमा कीज्यो करि मरजी. १५

४ वन्दना कर्म.

नमौं रिपभ जिनदेव अजित जिन जीति कर्मको,
संभव भवदुःखहरन करन अभिनंद शर्मको;
सुमति सुमतिदातार तार भवसिंधु पार कर,
पद्मप्रभ पद्माभ भानि भवभीतिप्रीति धर. १६

श्री सुपार्श्व कृतपाश नाश भव जास शुद्धकर,
श्री चंद्रप्रभ चंद्रकांतिसम देह कांतिधर;
पुष्पदंत दमि दोपकोप भवि पोप रोपहर,
शीतल शीतल करन हरन भवताप दोपहर. १७

श्रेयरूप जिनश्रेय घेय नित सेय भव्यजन,
वासुपूज्य शत पूज्य वासवादिक भवभय हन;
विमल विमलमति देन अंतगत है अनंत जिन,
धर्म शर्म शिवकरन शांति जिन शांति विधायिन. १८

कुंथु कुंथुमुख जीव पाल अरनाथ जालहर,
मल्लि मल्लसम मोहमल्ल मारन प्रचारधर;

गुणीजनोंको देख हृदयमें, मेरे प्रेम उमड़ आवे,
बने जहाँतक उनकी सेवा, करके यह मन सुख पावे;
होऊं नहीं कृतघ्न कभी मैं, द्रोह न मेरे उर आवे,
गुण ग्रहणका भाव रहे नित, दृष्टि न दोषों पर जावे. ६

कोई बुरा कहो या अच्छा, लक्ष्मी आवे या जावे,
लाखों वर्षोंतक जीऊं या मृत्यु आज ही आजावे;
अथवा कोई कैसा ही भय, या लालच देने आवे,
तो भी न्यायमार्गसे मेरा, कभी न पद डिगने पावे. ७

होकर सुखमें मग्न न फूले, दुखमें कभी न घबरावे,
पर्वत नदी स्मशान भयानक, अटवीसे नहिं भय खावे;
रहे अडोल अकंप निरन्तर, यह मन दृढतर बन जावे,
इष्टवियोग-अनिष्टयोगमें, सहनशीलता दिखलावे. ८

सुखी रहें सब जीव जगतके, कोई कभी न घबरावे,
वैर पाप-अभिमान छोड जग, नित्य नये मंगल गावे;
घर घर चर्चा रहे धर्मकी, दुष्कृत दुष्कर हो जावें,
ज्ञानचरित उन्नत कर अपना, मनुज जन्मफल सब पावें. ९

ईति-भीति व्यापे नहिं जगमें, वृष्टि समय पर हुआ करे,
धर्मनिष्ठ होकर राजा भी, न्याय प्रजाका किया करे;
रोग-मरी-दुर्भिक्ष न फैले, प्रजा शान्तिसे जिया करे,
परम अहिंसा-धर्म जगतमें फैल सर्व हित किया करे. १०

फैले प्रेम परस्पर जगमें, मोह दूर पर रहा करे,
अप्रिय-कटुक-कठोर-शब्द नहिं, कोई मुखसें कहा करे;
बनकर सब 'युग-वीर' हृदयसे, देशोन्नतिरत रहा करे,
वस्तुस्वरूप विचार खुशीसे, सब दुःख-संकट सहा करे. ११

छे, तेम स्वपरप्रकाशक अेवी चैतन्यसत्तानो प्रत्यक्ष गुण जेने विषे छे अेवो आत्मा होवानुं प्रमाण छे.

बीजुं पदः—

आत्मा नित्य छे. घटपट आदि पदार्थो अमुक काळवर्ती छे. आत्मा त्रिकाळवर्ती छे. घटपटादि संयोगे करी पदार्थ छे. आत्मा स्वभावे करीने पदार्थ छे, केमके तेनी उत्पत्ति माटे कोई पण संयोगो अनुभव योग्य थता नथी. कोई पण संयोगी द्रव्यथी चेतनसत्ता प्रगट थवा योग्य नथी, माटे अनुत्पन्न छे. असंयोगी होवाथी अविनाशी छे, केमके जेनी कोई संयोगथी उत्पत्ति न होय, तेनो कोईने विषे लय पण होय नहीं.

त्रीजुं पदः—

आत्मा कर्त्ता छे. सर्व पदार्थ अर्थक्रियासंपन्न छे. कंई ने कंई परिणामक्रियासहित ज सर्व पदार्थ जोवामां आवे छे. आत्मा पण क्रियासंपन्न छे. क्रियासंपन्न छे माटे कर्त्ता छे. ते कर्त्तापणुं त्रिविध श्री जिने विवेच्युं छे; परमार्थथी स्वभाव परिणतिअे निज स्वरूपनो कर्त्ता छे. अनुपचरित (अनुभवमां आववायोग्य-विशेष संबंध सहित) व्यवहारथी ते आत्मा द्रव्यकर्मनो कर्त्ता छे. उपचारथी घर, नगर आदिनो कर्त्ता छे.

चोथुं पदः—

आत्मा भोक्ता छे. जे जे कंई क्रिया छे ते ते सर्व सफळ छे, निरर्थक नथी. जे कंई पण करवामां आवे तेनुं फल भोगववामां आवे अेवो प्रत्यक्ष अनुभव छे. विष खावाथी विषनुं फळ, साकर खावाथी साकरनुं फल, अग्निस्पर्शथी ते अग्निस्पर्शनुं फळ, हीमने स्पर्श करवाथी हीमस्पर्शनुं जेम

संदेहरहित छे, अेम परमपुरुषे निरूपण कर्युं छे. अे छ पदना विवेक जीवने स्वस्वरूप समजवाने अर्थे कह्यो छे. अनादि स्वप्नदशाने लीधे उत्पन्न थयेलो अेवो जीवनो अहंभाव, ममत्वभाव, ते निवृत्त थवाने अर्थे आ छ पदनी ज्ञानी पुरुषोअे देशना प्रकाशी छे. ते स्वप्नदशाथी रहित मात्र पोतानुं स्वरूप छे, अेम जो जीव परिणाम करे, तो सहज मात्रमां ते जागृत थई सम्यक्‌दर्शनने प्राप्त थाय; सम्यक्‌दर्शनने प्राप्त थई स्वस्वभावरूप मोक्षने पामे. कोई विनाशी, अशुद्ध अने अन्य अेवा भावने विषे तेने हर्ष, शोक, संयोग, उत्पन्न न थाय. ते विचारे स्वस्वरूपने विशेज शुद्धपणुं, संपूर्णपणुं, अविनाशीपणुं, अत्यंत आनंदपणुं अंतररहित तेना अनुभवमां आवे छे. सर्व विभावपर्यायमां मात्र पोताने अध्यासथी अैक्यता थई छे. तेथी केवळ, पोतानुं भिन्नपणुं ज छे. अेम स्पष्ट, प्रत्यक्ष, अत्यंत प्रत्यक्ष, अपरोक्ष तेने अनुभव थाय छे. विनाशी अथवा अन्य पदार्थना संयोगने विषे तेने इष्ट–अनिष्टपणुं प्राप्त थतुं नथी. जन्म, जरा, मरण, रोगादि बाधारहित संपूर्ण माहात्म्यनुं ठेकाणुं अेवुं निज स्वरूप जाणी, वेदी ते कृतार्थ थाय छे. जे जे पुरुषोने छ पद सप्रमाण अेवां परमपुरुषनां वचने आत्मानो निश्चय थयो छे, ते ते पुरुषो सर्व स्वरूपने पाम्या छे; आधि, व्याधि, उपाधि, सर्व संगथी रहित थया छे, थाय छे अने भावि काळमां पण तेमज थशे.

जे सत्पुरुषोअे जन्म, जरा, मरणनो नाश करवावाळो, स्वस्वरूपमां सहज अवस्थान थवानो उपदेश कह्यो छे, ते सत्पुरुषोने अत्यंत भक्तिथी नमस्कार छे. तेनी निष्कारण करुणाने नित्य प्रत्ये निरंतर स्तववामां पण आत्मस्वभाव

जंकिंचि.

जं किंचि नाम तिथ्थं, सग्गे पायालि माणुसे लोअे;
जाइं जिणविंबाइं, ताइं सव्वाइं वंदामि. १

नमुथ्थुणं वा शक्रस्तव.

नमुथ्थुणं अरिहंताणं भगवंताणं; १
आइगराणं, तिथ्थयराणं, सयंसंबुद्धाणं; २
पुरिसुत्तमाणं, पुरिससिंहाणं, पुरिसवरपुंडरीआणं.
पुरिसवरगंधहथ्थीणं; ३
लोगुत्तमाणं, लोगनाहाणं, लोगहिआणं,
लोगपईवाण, लोगपज्जोअगराणं; ४
अभयदयाणं, चक्खुदयाणं, मग्गदयाणं,
सरणदयाणं, जीवदयाणं; वोहिदयाणं; ५
धम्मदयाणं, धम्मदेसियाणं, धम्मनायगाणं,
धम्मसारहीणं, धम्मवरचाउरंतचक्कवट्टीणं,
दीवो ताणं सरण गई पईट्ठा; ६
अप्पडिहयवरनाणदंसणधराणं, विअट्टछउमाणं; ७
जिणाणं जावयाणं, तिन्नाणं तारयाणं,
वुद्धाणं वोहयाणं, मुत्ताणं मोअगाणं; ८
सवन्नूणं सव्वदरिसिणं, सिवमयलमरुअ-
मणंतमक्खयमव्वावाहमपुणरावित्ती सिद्धिगइनामधेयं
ठाणं संपत्ताणं, नमो जिणाणं, जिअभयाणं; ९
जेअ अईआ सिद्धा, जेअ भविस्संति अणागअे
काले, संपई अ वट्टमाणा, सव्वे तिविहेण वंदामि. १०

जय वीयराय जगगुरु, होउ मम तुह पभावओ भयवं;
भवनिव्वेओ मग्गा-णुसारिआ ईट्ठफलसिद्धि. १

लोगविरुद्धच्चाओ गुरुजणपूआ परत्थकरणं च;
सुहगुरुजोगो तव्वयणसेवणा आभवमखंडा. २

वारिज्जई जईवि निआणबंधणं वीयराय तुह समओ;
तहवि मम हुज्ज सेवा, भवे भवे तुम्ह चलणाणं. ३

दुक्खक्खओ कम्मक्खओ, समाहिमरणं च बोहिलाभो अ;
संपज्जओ मह ओअं, तुह नाह पणाम करणेणं. ४

सर्व मंगलमांगल्यं, सर्वकल्याणकारणं;
प्रधानं सर्व धर्माणां, जैनं जयति शासनं. ५

अरिहंत चेइआणं.

अरिहंतचेइआणं, करेमि काउस्सग्गं. १

वंदणवत्तिआओ, पूअणवत्तिआओ, सक्कारवत्तिआओ;
सम्माणवत्तिआओ, बोहिलाभवत्तिआओ,
निरुवसग्गवत्तिआओ; २

सद्धाओ, मेहाओ, धीइओ, धारणाओ, अणुप्पेहाओ,
वढ्ढमाणीओ, ठामि काउस्सग्गं. ३

कल्लाणकंदं स्तुति.

कल्लाणकंदं पढमं जिणंदं, संतिंतओ नेमिजिणं मुणिंदं;
पासं पयासं सुगुणिक्कठाणं, भत्तिई वंदे सिरिवद्धमाणं. १

हलके व्है चाले सें निकसे; बूडे जे शिरभार प्रभु०
उपकारीको नहि वीसरीअे; येहि धर्म-अधिकार-प्रभु०
धर्मपाल प्रभु तुं मेरे तारक; क्युं भूलुं उपकार प्रभु०

(मध्याह्न पहेलांनी भक्तिनो क्रम समय ९॥-११॥)

मंगळाचरण तथा जिनेश्वरनी वाणी. पृष्ठ १—२

वीश दोहरा—यमनियम—क्षमापना. पृष्ठ ६-१९-२०

२१. स्वर्गीय कविवर रूपचंद्रजी पांडे कृत.

जिनेंद्र पंचकल्याणक.

मंगलगीत या पंचमंगल

जन्म्या श्री गुरुराज जगत हित कारणे,
करवा अम उद्धार वारी जाउं वारणे. अे देशी

पणविवि पंच परमगुरु, गुरु जिनशासनो,
सकलसिद्धिदातार सु. विघनविनासनो;
सारद अरु गुरु गौतम, सुमतिप्रकासनो,
मंगलकर चउसंघहि, पापपणासनो.

पापहि पणासन गुणहि गरुवा, दोप अष्टादश-रहिउ,
धरि ध्यान करम विनासि केवलज्ञान अविचल जिन लहिउ;
प्रभु पंचकल्याणक-विराजित, सकल सुर नर ध्यावहीं.
त्रैलोकनाथ सुदेव जिनवर जगत मंगल गावहीं १

१. गर्भकल्याणकः—

जाके गरभकल्याणक, धनपति आइयो,
अवधिग्यान-परवान, सु ईन्द्र पठाइयो;

कलपवासिघर घंट, अनाहद वज्जिया,
जोतिसि-घर हरिनाद, सहज गलगज्जिया.

गज्जिया सहज हि संख भावन-भुवन सबद सुहावने,
वितरनिलय पटु पटह वज्जहि, कहत महिमा क्यों बने;
कंपित सुरासन अवधिवल जिन-जनम निहचै जानियो,
धनराज तव गजराज माया,-मयी निरमयो आनियो. ५

जोजन लाख गयंद वदन-सौ निरमअे,
वदन वदन वसु दंत, दंत सर संठअे;
सर सर सौ-पनवीस, कमलिनी छाजहीं,
कमलिनि कमलिनि कमल, पचीस विराजहीं.

राज हिं कमलिनि कमल ठोतर, सौ मनोहर दल वने,
दल दलहिं अपछर नटई नवरस, हावभाव सुहावने;
मणि कनककिंकणि वर विचित्र, सु अमरमंडप सोहअे,
गर घंट चँवर धुजा पताका, देखि त्रिभुवन मोहअे. ६

तिहिं करि हरि चढि आयउ, सुरपरिवारियो,
पुरहि प्रदच्छन दे त्रय, जिन जयकारियो;
गुप्त जाय जिन जननीहि, सुख निद्रा रची,
मायामइ सिसु राखि तौ, जिन आन्यो सची.

आन्यो सची जिनरूप निरखत, नयन त्रिपति न हूजिये,
तव परमहरपित हृदयहरना, साहस लोचन पूजिये;
पुनि करि प्रणाम जु प्रथम इन्द्र, उछंग धरि प्रभु लीनउ,
ईसान इन्द्र सु चंद्र छवि सिर छत्र प्रभुके दीनउ. ७

सनतकुकार महेन्द्र, चमर दुई ढारहीं,
सेस सक्र जयकार, सबद उच्चारहीं;

उच्छवसहित चतुरविध, सुर हरखित भअे
जोजन सहस निन्यायवै, गगन उलँघी गअे.
लँघि गये सुरगिरि जहाँ पांडुक—वन विचित्र विराजहीं,
पांडुक शिला तहँ अर्धचंद्रसमान मणि छवि छाजहीं;
जोजन पचास विशाल दुगुणायाम वसु उंची गनी,
वर अष्ट मंगल कनक कलसनि, सिंहपीठ सुहावनी. ८

रचि मणिमंडप सोभित, मध्य सिंहासनो,
थाप्यो पूरव मुख तहँ, प्रभु कमलासनो;
बाजईं ताल मृदंग, भेरि वीणा घने,
दुंदुभिप्रमुखमधुरधुनि, अवर जु बाजने.
बाजनें बाजहिं सचीं सब मिलि, धवल मंगल गावहीं,
पुनि करहिं नृत्य सुरांगना सब देव कौतुक धावहीं;
भरिछीरसागर-जलजु हाथहीं हाथ सुरगन ल्यावहीं,
सौधर्म अरु ईसानइन्द्र सु कलस ले प्रभु न्हावहीं ९

वदन-उदरअवगाह, कलसगत जानिअे,
अेक चार वसु जोजन, मान प्रमानिअे;
सहस-अठोतर कलसा, प्रभुके सिर ढरें,
पुनि सिंगारप्रमुख आ-चार सवई करें.
करि प्रगट प्रभु महिमामहोच्छव, आनि पुनि मातहिं दयो.
धनपतिहिं सेवा राखी सुरपति, आप सुरलोकहिं गयो;
जनमाभिषेक महंत महिमा सुनत सब सुख पावहीं,
भन 'रूपचंद' सुदेव जिनवर, जगत मंगल गावहीं. १०

मणिमयभाजन केश, परिट्ठिय सुरपती,
छीर-समुद्र जल खिपकरि, गयो अमरावती;
तप संजमबल प्रभुको, मनपरजय भयो,
मौनसहित तप करत, काल कछु तहँ गयो.
गयो कछु तहँ काल तपबल रिद्धि वसु विधि सिद्धिया,
जसु धर्मध्यानबलेन खयगय, सप्त प्रकृति प्रसिद्धिया;
खिपि सातयेँगुण जतनविन तहँ, तीनप्रकृतिजु बुधि बढिउ,
करि करण तीन प्रथम सुकलबल; खिपकसेनी प्रभु चढिउ. १४

प्रकृति छतीस नवें गुण-थान विनासिया,
दसवें सूच्छमलोभ,-प्रकृति तहँ नासिया,
सुकल ध्यान पद दूजो, पुनि प्रभु पूरियो,
बारहवें-गुण सोरह प्रकृति जु चूरियो.
पूरियो त्रेसठि प्रकृति इहविध, घातिआ, करमनितनी,
तप कियो ध्यान प्रयंत बारह, विध त्रिलोकसिरोमनी:
निःक्रमणकल्यानक सु महिमा, सुनत सब सुख पावहीं,
जन 'रूपचंद' सुदेव जिनवर, जगत मंगल गावहीं. १५

---

४. ज्ञानकल्याणकः—

तेरहवें गुण थान, सयोगी जिनेसुरो,
अनंतचतुष्टयमंडित, भयो परमेसुरो:
समवसरन तब धनपति, बहुविध निरमयो,
आगमजुगतिप्रमाण. गगनतल परिठयो.
परिठयो चित्रविचित्र मणिमय, सभामंडप सोहये,
तिहि मध्य बारह बने कोठे, बनक सुरनर मोहये:
मुनिकलपवासिनि अरजिका पुनि, ज्योतिभौमभुवन तिया,
पुनि, भवन व्यंतर नभग सुर नर पसुनि कोठे बैठिया. १६

भवतन - भोग - विरत्त, कदाचित चिंतये,
धन जोबन पिय पुत्त, कलत्त अनित्त ये;
कोउ न सरन मरनदिन, दुःख चहुँगतिभरयो,
सुख दुःख एकहि भोगत, जिय विधिवश परयो.

परयो विधिवश आन चेतन, आन जड़ जु कलेवरो,
तन असुचि, परतैं होय आस्रव, परिहरेतैं संवरो;
निरजरा तपबल होय, समकित विन सदा त्रिभुवन भ्रम्यो,
दुर्लभ विवेक विना न कबहुं, परम धरमविषे रम्यो. १२

ये प्रभु बारह पावन, भावन भाईया.
लौकांतिक वर देव, नियोगी आईया;
कुसुमांजलि दे चरन - कमल सिर नाईयो,
स्वयंबुद्ध प्रभु थुति करि, तिन समुझाईयो.

समुझाय प्रभुको गये निजपद पुनि महोच्छव हरि कियो,
रुचिरुचिर चित्र विचित्र सिविका, कर सुनंदन वन लियो;
तहँ पंचमूठी लोच कीनो, प्रथम सिद्धनि नुति करी,
मंडिय महाव्रत पंच दुद्धर, सकल परिगह परिहरी. १३

मणिमयभाजन केश, परिट्ठिय सुरपती,
छीर-समुद्र जल खिपकरि, गयो अमरावती;
तप संजमबल प्रभुको, मनपरजय भयो,
मौनसहित तप करत, काल कछु तहँ गयो.
गयो कछु तहँ काल तपबल रिद्धि वसु विधि सिद्धिया,
जसु धर्मध्यानबलेन खयगय, सप्त प्रकृति प्रसिद्धिया;
खिपि सातयेंगुण जतनविन तहँ, तीनप्रकृतिजु बुधि बढिउ,
करि करण तीन प्रथम सुकलबल; खिपकसेनी प्रभु चढिउ. १४
प्रकृति छतीस नवें गुण-थान विनासिया,
दसवें सूच्छमलोभ,-प्रकृति तहँ नासिया,
सुकल ध्यान पद दूजो, पुनि प्रभु पूरियो,
बारहवें-गुण सोरह प्रकृति जु चूरियो.
चूरियो त्रेसठि प्रकृति इहविध, घातिया करमनितनी,
तप कियो ध्यान प्रयंत बारह, विध त्रिलोकसिरोमनी:
निःक्रमणकल्याणक सु महिमा, सुनत सब सुख पावहीं,
जन 'रूपचंद' सुदेव जिनवर, जगत मंगल गावहीं. १५

---

४. ज्ञानकल्याणकः—

तेरहवें गुण थान, सयोगी जिनेसुरो,
अनंतचतुष्टयमंडित, भयो परमेसुरो:
समवसरन तब धनपति, बहुविध निरमयो,
आगमजुगतिप्रमाण, गगनतल परिठयो.
परिठयो चित्रविचित्र मणिमय, सभामंडप सोहए,
तिहि मध्य बारह बने कोठे, बनक सुरनर मोहए:
मुनिकल्पवासिनि अरजिका पुनि, ज्योतिभौमभुवन तिया,
पुनि, भवन व्यंतर नभग सुर नर पसुनि कोठे बैठिया. १६

२२. श्रीमद्यशोविजयजी उपाध्याय कृत

आठ दृष्टिनी सज्झाय.

ढाळ पहेली

चतुर सनेही मोहना—ए देशी.

शिव सुख कारण उपदिशी, योगतणी अड दिठ्ठीरे;
ते गुण थुणी जिनवीरनो, करशुं धर्मनी पुठ्ठीरे.
वीरजिनेसर देशना० १

सघन अघन दिनरयणीमां, बालविकल ने अनेरारे;
अर्थ जुए जेम जुजुआ, तेम ओघनजरना फेरारे. वीर० २

दर्शन जे थयां जुजुआं, ते ओघ नजरने फेरेरे;
भेद थिरादिक दृष्टिमां, समकित दृष्टिने हेरेरे. वीर० ३

दर्शन सकलना नय ग्रहे, आप रहे निज भावेरे;
हित करी जनने संजीवनी, चारो तेह चरावेरे. वीर० ४

दृष्टि थिरादिक चारमां, मुगति प्रयाण न भाजेरे;
रयणि शयन जेम श्रमहरे, सुरनर सुख तेम छाजेरे. वीर० ५

एह प्रसंगथी मैं कह्युं, प्रथम दृष्टि हवे कहीएरे;
जिहां मित्रा तिहां बोध जे, ते तृण अगनिस्यो लहीएरे. वीर० ६

व्रत पण जम इहां संपजे, खेद नहीं शुभ काजेरे;
द्वेष नहीं वळी अवरशुं, एह गुण अंग विराजेरे. वीर० ७

योगनां बीज इहां ग्रहे, जिनवर शुद्ध प्रणामोरे;
भावाचारज सेवना, भव-उद्वेग सुठामोरे. वीर० ८

द्रव्य अभिग्रह पालवा, औषध प्रमुखने दानेरे;
आदर आगम आसरी, लिखनादिक बहुमानेरे. वीर० ९

लेखन पूजन आपवुं, श्रुत वाचना उद्ग्राहोरे;
भाव विस्तार सज्झायथी, चिंतन भावना चाहोरे. वीर० १०
बीज कथा भली सांभळी, रोमांचित हुवे देहरे;
अेह अवंचक योगथी, लहीअे धरम सनेहरे. वीर० ११
सद्गुरु योगे वंदन क्रिया, तेहथी फल होय जेहोरे;
योग क्रिया फळ भेदथी, त्रिविध अवंचक अेहोरे. वीर० १२
चाहे चकोर ते चंद्रने, मधुकर मालती भोगीरे;
तेम भवि सहजगुणे होये, उत्तम निमित्त संयोगीरे. वीर० १३
अेह अवंचक योग ते, प्रगटे चरमावर्त्तरे;
साधुने सिद्ध दशासमुं, बीजनुं चित्त प्रवर्त्तरे. वीर० १४
करण अपूर्वना निकटथी, जे पहेलुं गुणठाणुंरे;
मुख्यपणे ते इहां होये, सुयश विलासनुं टाणुंरे. वीर० १५

ढाळ बीजी.

मनमोहन मेरे—अे देशी.

दर्शन तारा दृष्टिमां, मनमोहन मेरे; गोमय अग्नि समान; म०
शौच संतोष ने तप भलुं म० सज्झाय ईश्वर ध्यान. म०
नियम पंच ईहां संपजे, म० नहीं किरिआ उद्वेग; म०
जिज्ञासा गुणतत्त्वनी, म० पण नहीं निज हठ टेग. म०
अेह दृष्टि होय वरततां, म० योगकथा बहु प्रेम; म०
अनुचित तेह न आचरे, म० वाळयो वळे जेम हेम. म०
विनय अधिक गुणीनो करे, म० देखे निजगुण हाण; म०
त्रास धरे भवभव थकी, म० भव माने दुःखखाण. म०
शास्त्र घणां मति थोडली, म० शिष्ट कहे ते प्रमाण; म०
सुयश लहे अे भावथी, म० न करे जुठ डफाण. म०

ढाळ त्रीजी.

प्रथम गोवाळ तणे भवे जीरे.-ए देशी.

त्रीजी दृष्टि बला कहीजी, काष्ठअग्नि सम बोध;
क्षेप नहीं आसन सधेजी, श्रवण समीहा शोधरे.
जिनजी, धनधन तुज उपदेश. १

तरुण सुखी स्त्री परिवर्योजी, जेम चाहे सुरगीत;
सांभळवा तेम तत्त्वनेजी, ए दृष्टि सुविनीत रे. जि० २

सरी ए बोध प्रवाहनीजी, ए विण श्रुत थलकूप;
श्रवण समीहा ते किसीजी, शयित सुणे जेम भूपरे. जि० ३

मन रीझे तन उल्लसेजी, रीझे बुझे एक तान;
ते इच्छा विण गुणकथाजी, बहेरा आगळ गानरे. जि० ४

विघन इहां प्राये नहींजी, धर्म हेतुमां कोय;
अनाचार परिहारथीजी, सुयश महोदय होयरे. जि० ५

ढाळ चोथी.

सांहेलीआं मुनिवर मनवन तुम अवतार.-ए देशी.

योग दृष्टि चोथी कहीजी, दीप्ता तिहां न उत्थान;
प्राणायाम ते भावथीजी, दीप प्रभासम ज्ञान.
मनमोहन जिनजी, मीठी ताहरी वाण. १

बाह्य भाव रेचक इहांजी, पूरक अंतर भाव;
कुंभक थिरता गुणे कहीजी, प्राणायाम स्वभाव. मन० २

धर्म अर्थे इहां प्राणनेजी, छांडे पण नहीं धर्म;
प्राण अर्थे संकट पडेजी, जुओ ए दृष्टिनो मर्म, मन० ३

तत्त्व श्रवण मधुरोदकेजी, इहां होवे बीज प्ररोह;
खार उदक सम भव त्यजेजी, गुरुभक्ति अद्रोह. मन० ४

सूक्ष्मबोध तो पण ईहांजी, समकितविण नवि होयः
वेद्य संवेद्य पदे कह्योजी, ते न अवेद्ये जोय. मन० ५

वेद्य बंधशिव हेतु छेजी, संवेदन तस नाण;
नयनिक्षेपे अति भलुंजी, वेद्य संवेद्य प्रमाण. मन० ६

ते पद ग्रंथि विभेदथीजी, छेहली पाप प्रवृत्ति;
तसलोह पद घृति समीजी, तिहां होय अंत निवृत्ति. मन० ७

अेह थकी विपरीत छेजी, पद ते अवेद्य संवेद्य;
भवाभिनंदी जीवनेजी, ते होय वज्र अभेद्य. मन० ८

लोभी कृपण दयामणोजी, मायी मच्छर ठाण;
भवाभिनंदी भय भर्योजी, अफल आरंभ अयाण. मन० ९

अेवा अवगुणवंतनुंजी, पद छे अवेद्य कठोर;
साधु संग आगमतणोजी, ते जीत्यो धुरंधोर. मन० १०

ते जिते सहजे टळेजी, विषम कुतर्क प्रकार;
दूर निकट हाथी हणेजी, जेम अे वठर विचार. मन० ११

हुं पाम्यो संशय नहींजी, मूरख करे अे विचार;
आळसुआ गुरु शिष्यनोजी, ते तो वचन प्रकार मन० १२

धीजे ते पति आवद्युंजी, आपमते अनुमान;
आगम ने अनुमानथीजी, साचुं लहे सुज्ञान. मन० १३

नहीं सर्वज्ञ जुजुआजी, तेहना जे वळी दास;
भक्ति देवनी पण कहीजी, चित्र अचित्र प्रकाश. मन० १४

देव संसारी अनेक छेजी, तेहनी भक्ति विचित्र;
अेक राग पर द्वेषथीजी, अेक मुक्तिनी अचित्र. मन० १५

इंद्रियार्थगत बुद्धि छेजी, ज्ञान छे आगम हेत;
असंमोह शुभ कृति गुणेजी, तेणे फल भेद संकेत. मन० १६

आदर किरिया रति घणीजी, विघन टले मिले लच्छि;
जिज्ञासा बुध सेवनाजी, शुभकृति चिन्ह प्रत्यच्छि. मन० १७
बुद्धि क्रिया भवफल दीयेजी, ज्ञानक्रिया शिवअंग;
असंमोह किरिया दीयेजी, शीघ्र मुक्तिफल चंग. मन० १८
पुद्गल रचना कारमीजी, तिहां जस चित्त न लीन;
एक मार्ग ते शिव तणोजी, भेद लहे जगदीन. मन० १९
शिष्य भणी जिन देशनाजी, कहे जन परिणति भिन्न;
कहे मुनिनी नय देशनाजी, परमारथथी अभिन्न. मन० २०
शब्द भेद झगडो किस्योजी, परमारथ जो एक;
कहो गंगा कहो सुर नदीजी, वस्तु फरे नहीं छेक. मन० २१
धर्म क्षमादिक पण मटेजी, प्रगटे धर्म संन्यास;
तो झगडा मोटा तणोजी, मुनिने कवण अभ्यास. मन० २२
अभिनिवेश सघळो त्यजीजी, चार लही जेणे दृष्टि;
ते लेशे हवे पंचमीजी, सुयश अमृत घनवृष्टि. मन० २३

ढाल पांचमी.

धन धन संप्रति साचो राजा–ए देशी.

दृष्टि थिरामांहि दर्शन नित्ये, रत्नप्रभा सम जाणोरे;
भ्रांति नहि वळी बोध ते सूक्ष्म, प्रत्याहार वखाणोरे. १
ए गुण वीर राज तणो न विसारुं, संभारुं दिनरातरे;
पशु टाळी सुररूप करे जे, समकितने अवदातरे. ए गुण० २
बाल धूलि घर लीला सरखी, भव चेष्टा इहां भासेरे;
रिद्धि सिद्धि सवि घटमां पेसे, अष्ट महा सिद्धि पासेरे. ए० ३
विषय विकारे न इंद्रिय जोडे, ते इहां प्रत्याहारोरे;
केवल ज्योति ते तत्त्व प्रकाशे, शेष उपाय असारोरे. ए० ४

२३. छूटक पदो

सुखकी सहेली है, अकेली उदासीनता;
अध्यात्मनी जननी, ते उदासीनता.

लघु वयथी अद्भुत थयो, तत्त्वज्ञाननो बोध;
अेज सूचवे अेम के, गति आगति कां शोध? १.
जे संस्कार थवो घटे, अति अभ्यासे कांय;
विना परिश्रम ते थयो, भव शंका शी त्यांय? २.
जेम जेम मति अल्पता, अने मोह उद्योत;
तेम तेम भवशंकना, अपात्र अंतर ज्योत. ३.
करी कल्पना दृढ करे, नाना नास्ति विचार;
पण अस्ति ते सूचवे, अेज खरो निर्धार. ४.
आ भव पण भव छे नहीं, अेज तर्क अनुकूळ;
विचारतां पामी गया, आत्मधर्मनुं मूळ. ५.

वि. सं. १९४१ श्रीमद् राजचंद्र

---

(२)

भिन्न भिन्न मत देखीये, भेद दृष्टिनो अेह;
अेक तत्त्वना मूळमां, व्याप्या मानो तेह. १.
तेह तत्त्वरूप वृक्षनुं, आत्मधर्म छे मूळ;
स्वभावनी सिद्धि करे, धर्म ते ज अनुकूळ. २.
प्रथम आत्मसिद्धि थवा, करीअे ज्ञान विचार;
अनुभवि गुरुने सेविये, बुधजननो निर्धार. ३.
क्षण क्षण जे अस्थिरता, अने विभाविक मोह;
ते जेनामांथी गया, ते अनुभवि गुरु जोय. ४.

बाह्य तेम अभ्यंतरे, ग्रंथ ग्रंथि नहि होय;
परम पुरुष तेने कहो, सरळ दृष्टिथी जोय. ५.

श्रीमद् राजचंद्र

(मध्याह्न पछीनो भक्तिनो क्रम समय २॥ थी ४॥)

मंगळाचरण तथा जिनेश्वरनी वाणी. पृ. १-२.
वीश दोहरा यमनीयम-क्षमापना. पृ. ६, १९-२०.

२४. गुणस्थान आरोहणक्रम

१. अपूर्व अवसर अेवो क्यारे आवशे?
क्यारे थईशुं बाह्यांतर निर्ग्रंथ जो?
सर्व संबंधनुं बंधन तिक्ष्ण छेदीने,
विचरशुं कव महत् पुरुषने पंथ जो. अपूर्व०

२. सर्व भावथी औदासीन्य वृत्ति करी,
मात्र देह ते संयम हेतु होय जो;
अन्य कारणे अन्य कशुं कल्पे नहीं,
देहे पण किंचित् मूर्छा नव जोय जो. अपूर्व०

३. दर्शनमोह व्यतीत थई उपज्यो बोध जे,
देह भिन्न केवळ चैतन्यनुं ज्ञान जो,
तेथी प्रक्षीण चारित्रमोह विलोकिये,
वर्ते अेवुं शुद्धस्वरूपनुं ध्यान जो. अपूर्व०

४ आत्मस्थिरता त्रण संक्षिप्त योगनी,
मुख्यपणे तो वर्ते देहपर्यंत जो;
घोर परिषह के उपसर्ग भये करी,
आवी शके नहीं ते स्थिरतानो अंत जो. अपूर्व०

५. संयमना हेतुथी योगप्रवर्तना,
स्वरूपलक्षे जिनआज्ञा आधीन जो;
ते पण क्षण क्षण घटती जाति स्थितिमां,
अंते थाये निज स्वरूपमां लीन जो. अपूर्व०

६. पंच विषयमां रागद्वेष विरहितता,
पंच प्रमादे न मळे मननो क्षोभ जो;
द्रव्य क्षेत्र ने काळ भाव प्रतिबंध वण,
विचरवुं उदयाधीन पण वीतलोभ जो. अपूर्व०

७. क्रोध प्रत्ये तो वर्ते क्रोधस्वभावता,
मान प्रत्ये तो दीनपणानुं मान जो;
माया प्रत्ये माया साक्षी भावनी,
लोभ प्रत्ये नहीं लोभ समान जो. अपूर्व०

८. बहु उपसर्गकर्ता प्रत्ये पण क्रोध नहीं,
वंदे चक्री तथापि न मळे मान जो;
देह जाय पण माया थाय न रोममां,
लोभ नहीं छो प्रबळ सिद्धि निदान जो. अपूर्व०

९. नग्नभाव मुंडभाव सह अस्नानता,
अदंत धोवन आदि परम प्रसिद्ध जो;
केश, रोम, नख के अंगे शृंगार नहीं,
द्रव्यभाव संयममय निर्ग्रंथ सिद्ध जो. अपूर्व०

१०. शत्रु मित्र प्रत्ये वर्ते समदर्शिता,
मान अमाने वर्ते ते ज स्वभाव जो;
जीवित के मरणे नहीं न्यूनाधिकता,
भव मोक्षे पण शुद्ध वर्ते समभाव जो. अपूर्व०

१७. मन वचन काया ने कर्मनी वर्गणा,
छूटे जहां सकळ पुद्गल संबंध जो;
अेवुं अयोगि गुणस्थानक त्यां वर्ततुं,
महाभाग्य सुखदायक पूर्ण अबंध जो. अपूर्व०

१८. अेक परमाणुमात्रनी मळे न स्पर्शता,
पूर्ण कलंक रहित अडोलस्वरूप जो.
शुद्ध निरंजन चैतन्यमूर्ति अनन्यमय,
अगुरुलघु अमूर्त सहजपदरूप जो. अपूर्व०

१९. पूर्वप्रयोगादि कारणना योगथी,
ऊर्ध्वगमन सिद्धालय प्राप्त सुस्थित जो;
सादि अनंत अनंत समाधिसुखमां,
अनंत दर्शन, ज्ञान, अनंतसहित जो. अपूर्व०

२०. जे पद श्री सर्वज्ञे दीठुं ज्ञानमां,
कही शक्या नहीं पण ते श्री भगवान जो.
तेह स्वरूपने अन्य वाणी ते शुं कहे?
अनुभवगोचर मात्र रह्युं ते ज्ञान जो. अपूर्व०

२१. अेह परमपदप्राप्तिनुं कर्युं ध्यान में,
गजा वगर ने हाल मनोरथ रूप जो;
तो पण निश्चय राजचंद्र मनने रह्यो,
प्रभु आज्ञाअे थाशुं ते ज स्वरूप जो. अपूर्व०

श्रीमद् राजचंद्र

---

२५. मूळमार्ग रहस्य

मूळ मारग सांभळो जिननो रे, करी वृत्ति अखंड सन्मुख; मूळ०
नोय पूजादिनी जो कामना रे, नोय व्हालुं अंतर भवदुःख. मूळ० १

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुर्गुरुर्देवो महेश्वरः,
गुरुः साक्षात् परब्रह्म तस्मै श्री गुरवे नमः १३

ध्यानमूल गुरुर्मूर्तिः पूजामूलं गुरुपदम्,
मंत्रमूलं गुरुर्वाक्यं मोक्षमूलं गुरुकृपा. १४

अखंडमंडलाकारं व्याप्तं येन चराचरम्,
तत्पदं दर्शित येन तस्मै श्री गुरवे नमः १५

अज्ञानतिमिरान्धानां ज्ञानांजनशलाकया,
चक्षुरुन्मिलितं येन तस्मै श्री गुरवे नमः १६

ध्यानधूपं मनःपुष्पं पंचेन्द्रिय हुताशनम्,
क्षमाजाप संतोषपुजा पूज्यो देवो निरंजनः १७

देवेषु देवोऽस्तु निरंजनो मे, गुरुर्गुरुष्वस्तु दमी शमी मे;
धर्मेषु धर्मोऽस्तु दयापरो मे, त्रिण्येव तत्वानि भवे भवे मे. १८

परमगुरवे नमः परंपराचार्य गुरवे नमः
परमगुरवे नमः साक्षात् प्रत्यक्ष सद्गुरवे नमोनमः १९.

अहो! अहो! श्रीसद्गुरु, करुणा सिंधु अपार;
आ पामर पर प्रभु कर्यो, अहो! अहो! उपकार. २०

शुं प्रभु चरण कने धरुं, आत्माथी सौ हीन;
ते तो प्रभुए आपीओ, वर्तुं चरणाधीन. २१

आ देहादि आजथी, वर्तो प्रभु आधीन.
दास दास हुं दास छुं, आप प्रभुनो दीन. २२

षट् स्थानक समजावीने, भिन्न बताव्यो आप;
म्यान थकी तरवारवत्, ए उपकार अमाप. २३

जे स्वरूप समज्या विना, पाम्यो दुःख अनंत;
समजाव्युं ते पद नमुं, श्री सद्गुरु भगवान. २४

नमस्कार.

जय जय गुरुदेव! सहजात्मस्वरूप परमगुरु शुद्ध चैतन्य स्वामी अंतरजामी भगवान इच्छामि खमासमणो वंदिउं जावणिज्जाए निसिहिआए मत्थएण वंदामि.

परम पुरुष प्रभु सद्गुरु, परमज्ञान सुखधाम;
जेणे आप्युं भान निज, तेने सदा प्रणाम. २५

नमस्कार.

जय जय गुरुदेव!........मत्थएण वंदामि.

देह छतां जेनी दशा वर्ते देहातीत;
ते ज्ञानीना चरणमां हो वंदन अगणित. २६

नमस्कार.

जय जय गुरुदेव!........मत्थएण वंदामि.

नमोऽस्तु, नमोऽस्तु, नमोऽस्तु, शरणं, शरणं, शरणं, त्रिकाल शरणं, भवो भव शरणं, सद्गुरु शरणं, सदा सर्वदा त्रिविध त्रिविध भाववंदन हो, विनयवंदन हो, समयात्मक वंदन हो, ॐ नमोस्तु जय गुरुदेव शांतिः, परम सार, परम सज्ञान, परम हेतु, परम दयाळ, परम मयाळ, परम कृपाळ पाणीसुरसाळ, अति सुकुमाळ, जीवदया प्रतिपाळ, धर्मनाकुना पाळ, 'मा हणो मा हणो' शब्दना वदनार, आपके चरणकमलमें मेरा मस्तक, आपके चरणकमल मेरे हृदयकमलमें आनंदपणे संस्थापित हों, संस्थापित हों: सत्पुरुषोंका सत्यवचन, मेरे चित्त स्मृतिके पटपर टंकोत्कीर्णवत् रहोहि, जयवंत रहे, जयवंत रहे.

आनन्दमानन्दकरं प्रसन्नं ज्ञानस्वरूपं निजबोधरूपम्;
योगीन्द्रमीडयं भवरोगवैद्यं श्रीमद्गुरुं नित्यमहं नमामि.

---

२७ आरती (१)

जय जय आरती सद्गुरुराया,
श्रीमद् राजचंद्र नमुं (तुज) पाया जय जय० १
पहेली आरती मिथ्या टाळे,
सम्यग्ज्ञान प्रकाश निहाळे. जय जय० २
बीजी आरती बीज उगाडे,
द्वंद्वातीतपणाने पमाडे. जय जय० ३
त्रीजी आरती त्रिकरण शुद्धि,
थाअे सहेजे निर्मळ बुद्धि. जय जय० ४
चोथी आरती अनंतचतुष्टय,
परिणामे आपे पद अव्यय. जय जय० ५
पंचमी आरती पंच संवरथी,
शुद्ध स्वभाव सहज लहे अरथी. जय जय० ६
श्रीमद् सद्गुरुराज कृपाअे,
सत्य मुमुक्षुपणुं प्रगटाये. जय जय० ७

आरती (२)

जयदेव जयदेव, जय पंच परम पद स्वामी;
प्रभु पंच परम पद स्वामी;
मोहादिक हणयाथी (२) अनंत गुणधामी. जयदेव जयदेव० १
लोकालोक प्रकाशक, सूर्य प्रगट ज्ञानी, प्रभु०
आरती करी जीव पामे (२) शिव पद सुखखाणी. जयदेव० २

पहेली आरती प्रभुनी, जिज्ञासु करता; प्रभु०
निजपद लक्ष लहीने (२) मिथ्यामति हरता. जयदेव० ३
बीजी आरती प्रभुनी, समकिती करता; प्रभु०
प्रभु सम निज चिद्रूपने (२) अंतर अनुभवता. जयदेव० ४
त्रीजी आरती प्रभुनी, शांत सुधा झरता; प्रभु०
रत्नत्रय उज्ज्वलथी (२) धर्मध्यान धरता. जयदेव० ५
चोथी आरती प्रभुनी, श्रेणी क्षपक चडता; प्रभु०
शुक्ल ध्यान पर योगे (२) मोह शत्रु हणता. जयदेव० ६
पंचमी आरती प्रभुनी, केवलश्री वरता; प्रभु०
धन्य धन्य महात्मा (२) सिद्धिसदन वसता. जयदेव० ७
शुद्ध चिदात्मनी आरती, आत्मार्थी करता; प्रभु०
श्री गुरुराज कृपाथी (२) भवजलधि तरता. जयदेव० ८

---

२८. मंगल दीवो (१)

दीवो रे दीवो प्रभु मंगलिक दीवो,
श्रीमद् सद्गुरु शाश्वत जीवो. दीवो० १
सम्यक् दर्शन नयन उजवाळे,
केवळ ज्ञान प्रकाश निहाळे. दीवो० २
भवभ्रमतिमिरने दूर नसावे,
मोह पतंगनो भस्म बनावे. दीवो० ३
पात्र कुपात्र न जोवे ज्योते,
जगवे ज्यां ते सद्विवेक ज्योते. दीवो० ४
कलिमल दूर टाळि झाळे,
श्रीमद् सद्गुरु उजाळ बनावे. दीवो० ५

श्रोता वक्ता भक्त सकलमें,
शिवकर वृद्धि करे मंगलमें. दीवो० ६
श्रीमद् सेवक भाव प्रभावे,
सेवक सेव्य अभेद स्वभावे. दीवो० ७

मंगल दीवो (२)

दीवो रे दीवो प्रभु मंगलिक दीवो;
ज्ञान दीवो प्रभु तुज चिरंजीवो. दीवो० १
निश्चय दीवे प्रगटे दीवो;
प्रगटावो भवि दीलमें दीवो. दीवो० २
प्रगट दीवो ज्ञानी परमात्मा;
तेने अर्पण हो निज आत्मा दीवो० ३
बहिरातमता तजी प्रभु शरणे;
बनो अंतरात्मा प्रभु स्मरणे. दीवो० ४
परमातमता निशदिन भावे;
आतम अर्पणता तो थावे. दीवो० ५
आतमभावना सतत अभ्यासे;
निज सहजात्मस्वरूप प्रकाशे दीवो० ६
आत्मज्योति दीवो झलहलतो;
प्रगट्यो उरमां जन्म सफळ तो दीवो० ७
श्रीमद् सद्गुरु राज कृपाथी;
स्वरूपसिद्धि साधे मोक्षार्थी. दीवो० ८

(रात्रिनी भक्तिनो क्रम समय ७॥-९॥)

वंदना तथा प्रणिपात स्तुति पृष्ठ ३७
मंगळाचरण तथा जिनेश्वरनी वाणी पृष्ठ १-२
वीश दोहरा-यमनियम. पृष्ठ ६-१०

२९. भक्तिनो उपदेश.

(तोटक छंद)

शुभ शीतळतामय छांय रही, मनवांछित ज्यां फळपंक्ति कहीः
जिनभक्ति ग्रहो तरुकल्प अहो, भजीने भगवंत भवंत लहो. १

निज आत्मस्वरूप मुदा प्रगटे, मनताप उताप तमाम मटेः
अति निर्जरता वणदाम ग्रहो, भजीने भगवंत भवंत लहो. २

समभावि सदा परिणाम थशे, जड मंद अधोगति जन्म जशे.
शुभ मंगळ आ परिपूर्ण चहो, भजीने भगवंत भवंत लहो. ३

शुभ भाव वडे मन शुद्ध करो, नवकार महापदने समरोः
नहि एह समान सुमंत्र कहो, भजीने भगवंत भवंत लहो. ४

करशो क्षय केवळ राग कथा, धरशो शुभ तत्त्वस्वरूप यथाः
नृपचंद्र प्रपंच अनंत दहो, भजीने भगवंत भवंत लहो. ५

६०

बिना नयन पावे नहीं, बिना नयनकी बातः
सेवे सद्गुरुके चरन सो पावे साक्षात्. १.
बूझी चहत जो प्यासको, है बूझनकी रीतः
पावे नहि गुरुगम बिना, एही अनादि स्थित. २.
एही नहि है कल्पना, एही नहि विभंगः
कहि नर पंचमकालमें, देखी वस्तु अभंग. ३.

क्षमापना– छपद्नो पत्र, पृष्ट २०-२१
वीतरागनो कहेलो......धर्म..... पृष्ट २६
मुनि पाठ पत्रो, मोक्षमाळाना पाठ वगेरे...
—: त्रण मंत्रनी माळा :—

ॐ

आत्मज्ञान समदर्शिता, विचरे उदयप्रयोग;
अपूर्व वाणी परमश्रुत, सद्गुरुलक्षण योग्य. १०.

प्रत्यक्ष सद्गुरु सम नहीं, परोक्ष जिन उपकार;
एवो लक्ष थया विना, उगे न आत्मविचार. ११.

सद्गुरुना उपदेश वण, समजाय न जिनरूप;
समज्या वण उपकार शो ? समज्ये जिनस्वरूप. १२.

आत्मादि अस्तित्वनां, जेह निरूपक शास्त्र;
प्रत्यक्ष सद्गुरुयोग नहीं, त्यां आधार सुपात्र. १३.

अथवा सद्गुरुए कह्यां, जे अवगाहन काज;
ते ते नित्य विचारवां, करी मतांतर त्याज. १४.

रोके जीव स्वच्छंद तो, पामे अवश्य मोक्ष;
पाम्या एम अनंत छे, भाख्युं जिन निर्दोष. १५.

प्रत्यक्ष सद्गुरु-योगथी, स्वच्छंद ते रोकाय;
अन्य उपाय कर्या थकी, प्राये बमणो थाय. १६.

स्वच्छंद मत आग्रह तजी, वर्ते सद्गुरु लक्ष;
समकित तेने भाखियुं, कारण गणी प्रत्यक्ष. १७.

मानादिक शत्रु महा, निजछंदे न मराय;
जातां सद्गुरु शरणमां, अल्प प्रयासे जाय १८

जे सद्गुरु उपदेशथी, पाम्यो केवलज्ञान;
गुरु रह्या छद्मस्थ पण, विनय करे भगवान १९.

एवो मार्ग विनय तणो भाख्यो श्री वीतराग;
मूळ हेतु ए मार्गनो, समजे कोई सुभाग्य २०.

असद्गुरु ए विनयनो, लाभ लहे जो कांई;
महा मोहनीय कर्मथी, बूडे भवजळ मांहि २१.

होय मुमुक्षु जीव ते, समजे अेह विचार;
होय मतार्थी जीव ते, अवळो ले निर्धार. २२.
होय मतार्थी तेहने, थाय न आतमलक्ष;
तेह मतार्थी लक्षणो, अहीं कह्यां निर्पक्ष. २३.

मतार्थी लक्षण

बाह्यत्याग पण ज्ञान नहीं, ते माने गुरु सत्य;
अथवा निज कुळधर्मना, ते गुरुमांज ममत्व. २४.
जे जिनदेहप्रमाण ने, समवसरणादि सिद्धि;
वर्णन समजे जिननुं, रोकी रहे निज बुद्धि. २५.
प्रत्यक्ष सद्गुरुयोगमां, वर्ते दृष्टि विमुख;
असद्गुरुने दृढ करे, निजमानार्थे मुख्य २६.
देवादि गति भंगमां, जे समजे श्रुतज्ञान;
माने निजमतवेषनो, आग्रह मुक्तिनिदान २७.
लह्युं स्वरूप न वृत्तिनुं, ग्रह्युं व्रत-अभिमान;
ग्रहे नहीं परमार्थने, लेवा लौकिक मान. २८.
अथवा निश्चयनय ग्रहे, मात्र शब्दनी मांय;
लोपे सद्व्यवहारने, साधन रहित थाय. २९.
ज्ञानदशा पाम्यो नहीं, साधनदशा न कांई;
पामे तेनो संग जे, ते बूडे भवमांही ३०
अ पण जीव मतार्थमां, निज मानादि काज;
पामे नहि परमार्थने, अन्-अधिकारीमां ज. ३१.
नहि कषाय उपशांतता, नहि अंतर वैराग्य;
सरळपणुं न मध्यस्थता, अे मतार्थी दुर्भाग्य ३२.
लक्षण कह्यां मतार्थीनां, मतार्थ जावा काज;
हवे कहुं आत्मार्थीनां, आत्म अर्थ सुखसाज ३३.

आत्मार्थी लक्षण

आत्मज्ञान त्यां मुनिपणुं, ते साचा गुरु होय;
बाकी कुळगुरुकल्पना, आत्मार्थी नहि जोय. ३४.

प्रत्यक्ष सद्गुरुप्राप्तिनो, गणे परम उपकार;
त्रणे योग अेकत्वथी, वर्ते आज्ञाधार. ३५.

अेक होय त्रण काळमां, परमारथनो पंथ;
प्रेरे ते परमार्थने, ते व्यवहार समंत. ३६.

अेम विचारी अंतरे, शोधे सद्गुरु योग;
काम अेक आत्मार्थनुं, बीजो नहि मनरोग. ३७.

कषायनी उपशांतता, मात्र मोक्ष अभिलाष;
भवे खेद प्राणीदया, त्यां आत्मार्थ निवास. ३८.

दशा न अेवी ज्यां सुधी, जीव लहे नहि जोग;
मोक्षमार्ग पामे नहीं, मटे न अंतर रोग. ३९.

आवे ज्यां अेवी दशा, सद्गुरुबोध सुहाय;
ते बोधे सुविचारणा, त्यां प्रगटे सुखदाय. ४०.

ज्यां प्रगटे सुविचारणा, त्यां प्रगटे निजज्ञान;
जे ज्ञाने क्षय मोह थई, पामे पद निर्वाण. ४१.

ऊपजे ते सुविचारणा, मोक्षमार्ग समजाय;
गुरुशिष्य संवादथी, भाखुं षट्पद आंहीं. ४२.

षट्पदनामकथन.

'आत्मा छे', 'ते नित्य छे', 'छे कर्ता निजकर्म';
'छे भोक्ता' वळी 'मोक्ष छे', 'मोक्ष उपाय सुधर्म'. ४३.

षट्स्थानक संक्षेपमां, षट्दर्शन पण तेह;
समजावा परमार्थने, कह्यां ज्ञानीअे अेह.

शंका-शिष्य उवाचः-

नथी दृष्टिमां आवतो, नथी जणातुं रूप;
बीजो पण अनुभव नहीं, तेथी न जीवस्वरूप. ४५.

अथवा देहज आत्मा, अथवा इंद्रिय प्राण;
मिथ्या जुदो मानवो, नहीं जुदु एंधाण ४६

वळी जो आत्मा होय तो, जणाय ते नहि केम?
जणाय जो ते होय तो, घट पट आदि जेम. ४७.

माटे छे नहि आत्मा, मिथ्या मोक्ष उपाय;
ए अंतर शंकातणो, समजावो सदुपाय ४८

(१) समाधान-सद्गुरु उवाचः-

भास्यो देहाध्यासथी, आत्मा देह समान;
पण ते बन्ने भिन्न छे, प्रगट लक्षणे भान. ४९

भास्यो देहाध्यासथी, आत्मा देह समान;
पण ते बन्ने भिन्न छे, जेम असि ने म्यान. ५०.

जे दृष्टा छे दृष्टिनो, जे जाणे छे रूप;
अबाध्य अनुभव जे रहे, ते छे जीवस्वरूप. ५१.

छे इंद्रिय प्रत्येकने, निज निज विषयनुं ज्ञान;
पांच इन्द्रीना विषयनुं, पण आत्माने भान. ५२.

देह न जाणे तेहने, जाणे न इंद्रिय प्राण;
आत्मानी सत्तावडे, तेह प्रवर्ते जाण. ५३.

सर्व अवस्थाने विषे, न्यारो सदा जणाय;
प्रगटरूप चैतन्यमय, ए एंधाण सदाय. ५४.

घट, पट आदि जाण तुं, तेथी तेने मान;
जाणनार ते मान नहि, कहिये केवुं ज्ञान? ५५.

परम बुद्धि कृश देहमां, स्थूळ देह मति अल्प;
देह होय जो आत्मा, घटे न आम विकल्प ५६

जड चेतननो भिन्न छे, केवळ प्रगट स्वभाव;
एकपणुं पामे नहीं, त्रणे काळ द्वयभाव ५७

आत्मानी शंका करे, आत्मा पोते आप;
शंकानो करनार ते, अचरज एह अमाप ५८

(२) शंका-शिष्य उवाच:-

आत्माना अस्तित्वना, आपे कह्या प्रकार;
संभव तेनो थाय छे, अंतर कर्ये विचार. ५९

बीजी शंका थाय त्यां, आत्मा नहि अविनाश;
देहयोगथी ऊपजे, देहवियोगे नाश ६०

अथवा वस्तु क्षणिक छे, क्षणे क्षणे पलटाय;
ए अनुभवथी पण नहीं, आत्मा नित्य जणाय. ६१

(२) समाधान-सद्गुरु उवाच:-

देह मात्र संयोग छे, वळी जड रूपी दृश्य;
चेतननां उत्पत्ति लय, कोना अनुभव वश्य? ६२

जेना अनुभव वश्य ए उत्पन्न-लयनुं ज्ञान;
ते तेथी जुदा विना, थाय न केमे भान ६३

जे संयोगो देखीए, ते ते अनुभव दृश्य;
ऊपजे नहि संयोगथी, आत्मा नित्य प्रत्यक्ष ६४

जडथी चेतन ऊपजे, चेतनथी जड थाय;
एवो अनुभव कोईने, क्यारे कदी न थाय ६५

कषायनी उपशांतता, मात्र मोक्ष-अभिलाष;
भवे खेद अंतर दया, ते कहिये जिज्ञास. १०८

ते जिज्ञासु जीवने, थाय सद्गुरु बोध;
तो पामे समकितने, वर्ते अंतर शोध. १०९

मत दर्शन आग्रह तजी, वर्ते सद्गुरुलक्ष;
लहे शुद्ध समकित ते, जेमां भेद न पक्ष. ११०

वर्ते निज स्वभावनो, अनुभव लक्ष प्रतीत;
वृत्ति वहे निजभावमां, परमार्थे समकित. १११

वर्धमान समकित थई, टाळे मिथ्याभास;
उदय थाय चारित्रनो, वीतराग पद वास. ११२

केवळ निजस्वभावनुं, अखंड वर्ते ज्ञान;
कहिये केवळज्ञान ते, देह छतां निर्वाण. ११३

कोटि वर्षनुं स्वप्न पण, जाग्रत थतां शमाय;
तेम विभाव अनादिनो, ज्ञान थतां दूर थाय. ११४

छूटे देहाध्यास तो, नहि कर्ता तुं कर्म;
नहि भोक्ता तुं तेहनो, अेज धर्मनो मर्म. ११५

अेज धर्मथी मोक्ष छे, तुं छो मोक्षस्वरूप;
अनंत दर्शन ज्ञान तुं, अव्याबाध स्वरूप. ११६

शुद्ध बुद्ध चैतन्यघन, स्वयंज्योति सुखधाम;
बीजुं कहिये केटलुं, कर विचार तो पाम. ११७

निश्चय सर्वे ज्ञानीनो, आवी अत्र समाय;
धरी मौनता अेम कहि, सहजसमाधिमांय. ११८

शिष्यबोधबीजप्राप्ति

सद्गुरुना उपदेशथी, आव्युं अपूर्व भान;
निजपद निजमांही लह्युं, दूर थयुं अज्ञान. ११९

भास्युं निजस्वरूप ते, शुद्ध चेतनारूप;
अजर अमर अविनाशि ने, देहातीत स्वरूप. १२०

कर्ता भोक्ता कर्मनो, विभाव वर्ते ज्यांय;
वृत्ति वही निजभावमां, थयो अकर्ता त्यांय. १२१

अथवा निजपरिणाम जे, शुद्ध चेतनारूप;
कर्ता भोक्ता तेहनो, निर्विकल्प स्वरूप. १२२

मोक्ष कह्यो निजशुद्धता, ते पामे ते पंथ;
समजाव्यो संक्षेपमां, सकळ मार्ग निर्ग्रंथ. १२३

अहो ! अहो ! श्री सद्गुरु, करुणासिंधु अपार;
आ पामर पर प्रभु कर्यो, अहो ! अहो ! उपकार. १२४

शुं प्रभु चरण कने धरुं, आत्माथी सौ हीन;
ते तो प्रभुए आपियो, वर्तुं चरणाधीन. १२५

आ देहादि आजथी, वर्तो प्रभु आधीन;
दास, दास हुं दास छुं, तेह प्रभुनो दीन. १२६

षट् स्थानक समजावीने, भिन्न बताव्यो आप;
म्यानथकी तरवारवत्, ए उपकार अमाप. १२७

उपसंहार

दर्शन षटे समाय छे, आ षट् स्थानकमांही;
विचारतां विस्तारथी, संशय रहे न कांई. १२८

आत्मभ्रांति सम रोग नहि, सद्गुरु वैद्य सुजाण;
गुरुआज्ञा सम पथ्य नहि, औषध विचार ध्यान. १२९

जो इच्छो परमार्थ तो, करो सत्य पुरुषार्थ;
भवस्थिति आदि नाम लई, छेदो नहि आत्मार्थ. १३०

निश्चयवाणी सांभळी, साधन तजवां नो'य;
निश्चय राखी लक्षमां, साधन करवां सोय. १३१

नय निश्चय अेकांतथी, आमां नथी कहेल;
अेकांते व्यवहार नहीं, बन्ने साथ रहेल. १३२

गच्छमतनी जे कल्पना, ते नहि सद्व्यवहार;
भान नहीं निजरूपनुं, ते निश्चय नहीं सार. १३३

आगळ ज्ञानी थई गया, वर्तमानमां होय;
थाशे काळ भविष्यमां, मार्गभेद नहि कोय. १३४

सर्व जीव छे सिद्धसम, जे समजे ते थाय;
सद्गुरुआज्ञा जिनदशा, निमित्त कारण मांय. १३५

उपादाननुं नाम लई, अे जे तजे निमित्त;
पामे नहि सिद्धत्वने, रहे भ्रांतिमां स्थित. १३६

मुखथी ज्ञान कथे अने, अंतर छूट्यो न मोह;
ते पामर प्राणी करे, मात्र ज्ञानीनो द्रोह. १३७

दया, शांति, समता, क्षमा, सत्य, त्याग, वैराग्य;
होय मुमुक्षुघट विषे, अेह सदाय सुजाग्य. १३८

मोहभाव क्षय होय ज्यां, अथवा होय प्रशांत;
ते कहीअे ज्ञानीदशा, बाकि कहीअे भ्रांत. १३९

सकळ जगत ते अेठवत्, अथवा स्वप्नसमान;
ते कहीअे ज्ञानीदशा, बाकी वाचाज्ञान. १४०

स्थानक पांच विचारीने, छठ्ठे वर्ते जेह;
पामे स्थानक पांचमुं, अेमां नहि संदेह. १४१

देह छतां जेनी दशा, वर्ते देहातीत;
ते ज्ञानीना चरणमां हो! वंदन अगणित. १४२

श्री नडियाद, आसो वद १ गुरु, १९५२

३५. स्तवनो

१ श्री ऋषभदेव स्वामी

श्री आनंदघनजी कृत स्तवन.

राग मारु

करम परीक्षा करण कुमर चाल्यो रे—ए देशी.

ऋषभ जिनेश्वर प्रीतम माहरो रे, ओर न चाहुं रे कंत;
रीझ्यो साहिब संग न परिहरे रे, भांगे सादि-अनंत. ऋषभ० १
प्रीत सगाई जगमां सहु करे रे, प्रीत सगाई न कोय;
प्रीत सगाई रे निरुपाधिक कही रे, सोपाधिक धन खोय. ऋषभ० २
कोई कंत कारण [1]काष्ठभक्षण करे रे, मिलशुं कंतने धाय;
ए मेळो नवि [2]कहिये संभवे रे, मेळो ठाम न ठाय. ऋषभ० ३
कोई पतिरंजन अति घणुं तप करे रे, पतिरंजन तन ताप;
ए पतिरंजन में नवि चित्त धर्युं रे, रंजन [3]धातु मिलाप. ऋषभ० ४
कोई कहे लीला रे अलख अलख तणी रे, लख पूरे मन आश;
दोषरहितने लीला नवि घटे रे, लीला दोषविलास. ऋषभ० ५
चित्तप्रसन्ने रे पूजनफळ कह्युं रे, पूजा अखंडित एह;
कपटरहित थई आतम अरपणा रे, आनंदघनपद रेह. ऋषभ० ६

श्री देवचंद्रजी कृत स्तवन.

[illegible] ए देशी.

ऋषभ जिणंदशुं प्रीतडी किम कीजे हो कहो चतुर, विचार,
प्रभुजी जई अलगा वस्या, तिहां किणे नवि हो को वचन-
उच्चार. ऋषभ० १

[illegible]

अक्षय पद देतां भविजनने, संकीर्णता नवि थाय;
शिवपद देवा जो समरथ छो, तो जश लेतां शुं जाय?
हो प्रभुजी! ओ० ५

सेवागुणरंज्या भविजनने, जो तुम करो वडभागी;
तो तमे स्वामी केम कहावो, निर्मम ने निरागी.
हो प्रभुजी! ओ० ६

नाभिनंदन जगवंदन प्यारो, जयगुरु जगजयकारी;
रूप विबुधनो मोहन पभणे, वृषभलंछन वलिहारी.
हो प्रभुजी! ओ० ७

---

२. श्री अजितनाथस्वामी.

राग आशावरी.

मारुं मन मोह्युं रे श्री विमलाचलेरे—ए देशी.

श्री आनंदघनजीकृत स्तवन.

पंथडो निहाळुंरे बीजा जिन तणोरे, अजित अजित गुणधाम;
जे तें जीत्यारे तेणे हुं जितियोरे, पुरुष किश्युं मुज नाम?
पंथडो० १

चरम नयण करी मारग जोवतांरे, भूल्यो सयल संसार;
जेणे नयणे करी मारग जोईए रे, नयण ते दिव्य विचार.
पंथडो० २

पुरुषपरंपर अनुभव जोवतांरे, अंधोअंध पलाय;
वस्तु विचारे रे जो आगमे करीरे, चरण धरण नहीं ठाय.
पंथडो० ३

तर्कविचारे रे वादपरंपरा रे, पार न पहोंचे कोय;
अभिमत वस्तु वस्तुगते कहे रे, ते विरला जग जोय.
पंथडो० ४

वस्तु विचारे रे दिव्य नयणतणो रे, विरह पड्यो निरधार;
तरतम जोगे रे तरतम वासना रे, वासित बोध आधार.
पंथडो० ५

*काळलब्धि लही पंथ निहाळशुं रे, ए आशा अवलंब;
ए जन जीवे रे जिनजी जाणजो रे, आनंदघनमत अंब.
पंथडो० ६

श्री देवचंद्रजी कृत स्तवन.

देखो गति दैवनी रे—ए देशी.

ज्ञानादिक गुणसंपदा रे, तुज अनंत अपार;
ते सांभळतां ऊपनी रे, रुचि तेणे पार उतार.
अजीत जिन तारजो रे, तारजो दीनदयाल. अ० १

जे जे कारण जेहनुं रे, सामग्री संयोग;
मळतां कारज नीपजे रे, कर्त्ता तणे प्रयोग. अ० २

कार्यसिद्धि कर्त्ता वसु रे, लहि कारण संयोग;
निज पदकारक प्रभु मिल्या रे, होय निमित्तह भोग. अ० ३

अजकुलगत केशरी लहे रे, निजपद सिंह निहाळ;
तिम प्रभुभक्ते भवि लहे रे, आतमशक्ति संभाळ. अ० ४

कारणपद कर्त्तापणे रे, करी आरोप अभेद;
निज पद अर्थी प्रभु थकी रे, करे अनेक उमेद. अ० ५

एहवा परमातम प्रभु रे, परमानंद स्वरूप;
स्याद्वाद सत्ता रसी रे, अमल अखंड अनूप. अ० ६

* [illegible]

उपादान आतम सहीरे, पुष्टालंबन देव; जिन०
उपादान कारणपणेरे, प्रगट करे प्रभु सेव. जिन० पू० ३
कार्य गुण कारण पणेरे, कारण कार्य अनूप; जिन०
सकल सिद्धता ताहरीरे, माहरे साधनरूप. जिन० पू० ४
अेकवार प्रभुवंदनारे, आगम रीते थाय; जिन०
कारण सत्ये कार्यनीरे, सिद्धि प्रतीत कराय. जिन० पू० ५
प्रभुपणे प्रभु ओळखीरे, अमल विमल गुण गेह; जिन०
साध्यदृष्टि साधकपणेरे, वंदे धन्य नर तेह. जिन० पू० ६
जन्म कृतारथ तेहनोरे, दिवस सफळ पण तास; जिन०
जगत शरण जिनचरणनेरे वंदे धरिय उल्लास. जिन० पू० ७
निज सत्ता निज भावथीरे, गुण अनंतनुं ठाण; जिन०
देवचंद्र जिनराजजीरे, शुद्ध सिद्ध सुखखाण. जिन० पू० ८

श्री यशोविजयजी कृत स्तवन.

मन मधुकर मोही रह्यो—अे देशी.

संभव जिनवर विनती, अवधारो गुण ज्ञातारे;
खामी नहीं मुज खिजमते, कदीय होशो फल दातारे. सं० १
कर जोडी ऊभो रहुं, रातदिवस तुम ध्यानोरे;
जो मनमां आणो नहीं, तो शुं कहीअे छानोरे. सं० २
खोट खजाने को नहीं, दीजीअे वांछित दानोरे;
करुणानजर प्रभुजी तणी, वाधे सेवक वानोरे. सं० ३
काळ लब्धि मुज [1]मति गणो, भाव लब्धि तुम हाथेरे;
लडथडतुं पण गजबच्चुं, गाजे [2]गयवर साथेरे. सं० ४
देशो तो तुमही भला, बीजा तो नवि याचुंरे;
वाचक यश कहे सांइशुं, फळशे अे मुज साचुंरे. सं० ५

---

१. ना. २. मोटो हाथी

श्री मोहनविजयजी कृत स्तवन.

आधा आम पधारो पूज्य–ए देशी.

समकित दाता समकित आपो, मन मागे थई मीठुं;
छती वस्तु देतां शुं सोचो, मीठुं जे सहुथे दीठुं,
प्यारा प्राण थकी छो राज, संभव जिनजी. मुजने० १
एम मन जाणो जे आपे लहीशे, ते लाध्युं शुं लेवुं;
पण परमारथ प्रीछी आपे, तेहिज कहीये देवुं. प्यारा० २
अर्थी छुं, तुं अर्थसमर्पक, एम मत करजो हांसुं;
प्रगट हतुं तुजने पण पहेलां, ए हांसानुं पासुं. प्यारा० ३
परम पुरुष, तुमे प्रथम भजीने, पाम्या एम प्रभुताई;
तेणे रुपे तुमने अमे भजीशे, तेणे तुम हाथ वडाई. प्यारा० ४
तमे स्वामी हुं सेवाकामी, मुजरो स्वामी निवाजे;
नहि तो हठ मांडी मागंतां, कोणविध सेवक लाजे. प्यारा० ५
ज्योतें ज्योति मीले मन प्रीछे, कुण लहेशे कुण भजशे;
साची भक्ति ते हंसतणी परे, खीरनीर नय करशे. प्यारा० ६
ओलग कीधी ते लेखे आवी, चरणभेट प्रभु दीधी;
रुप विबुधनो मोहन प्रभणे, रसना पावन कीधी. प्यारा० ७

---

४. श्री अभिनंदन स्वामी.

श्री आनंदघनजी कृत स्तवन

[illegible]

[illegible]

अभिनंदन जिन दरिसण तरसीए, दरिसण दुर्लभ देव.
मत मत भेदे रे जो जइ पूछीए, सहु थापे अहमेव. अभि० १

[illegible]

सामान्ये करी दरिशण दोहिलुं, निर्णय सकल विशेष;
मदमें घेर्योरे अंधो केम करे, रविशशि रूप विलेख. अभि० २

हेतु विवादे हो चित्त धरी जोइए, अति दुर्गम नयवाद;
आगमवादे हो गुरुगम को नहीं, ए सबलो विषवाद अभि० ३

घाति डुंगर आडा अति घणा, तुज दरिशण जगनाथ;
धीठाइ करी मारग संचरुं, सेंगू[1]! कोइ न साथ. अभि० ४

दरिशण दरिशण रटतो जो फरुं, तो रण रोझ समान;
जेहने पिपासा हो अमृतपाननी, किम भांजे विषपान. अभि० ५

[2]तरस न आवे हो मरण जीवन तणो, सीझे जो दरिशण काज;
दरिशण दुर्लभ सुलभ कृपा थकी, आनंदघन महाराज. अभि० ६

श्री देवचंद्रजीकृत स्तवन.

ब्रह्मचर्य पद पूजिये—ए देशी.

क्युं जाणुं क्युं वनी आवशे, अभिनंदन रस रीति हो मित्त;
पुद्गलअनुभव-त्यागथी, करवी जसु परतीत हो मित्त. क्युं०

परमातम परमेश्वरु, वस्तुगते ते अलिप्त हो मित्त;
द्रव्ये द्रव्य मिले नहीं, भावे ते अन्य अव्याप्त हो मित्त. क्युं०

शुद्ध स्वरूप सनातनो, निर्मल जे निःसंग हो मित्त;
आत्मविभूति परिणम्यो, न करे ते परसंग हो मित्त. क्युं०

पण जाणुं आगमबळे, मिलवुं तुम प्रभु साथ हो मित्त.
प्रभु तो स्वसंपत्तिमयी, शुद्ध स्वरूपनो नाथ हो मित्त. क्युं० ४

१ मार्गदर्शक भोमियो. २ त्रास.

परपरिणामिकता अछे, जे तुज पुद्गलजोग हो मित्त;
जड[1] चल[2] जगनी अेंठनो, न घटे तुजने भोग हो मित्त क्युं० ५

शुद्ध निमित्ती प्रभु ग्रहो, करी अशुद्ध पर हेय हो मित्त;
आत्मालंबी गुणलयी, सहु साधकनो ध्येय हो मित्त. क्युं० ६

जिम जिनवर आलंबने, वधे सधे अेक तान हो मित्त;
तिम तिम आत्मालंबनी ग्रहे स्वरूप निदान हो मित्त. क्युं० ७

स्वस्वरूप अेकत्वता, साधे पूर्णानंद हो मित्त;
रमे, भोगवे आतमा, रत्नत्रयी गुणवृंद हो मित्त क्युं० ८

अभिनंदन अवलंबने, परमानंदविलास हो मित्त;
देवचंद्र प्रभु-सेवना, करी अनुभव अभ्यास हो मित्त. क्युं० ९.

श्री यशोविजयजी कृत स्तवन.

गणजो हो प्रभु ए देशी.

दीठो हो प्रभु, दीठो जगगुरु तुज,
मूरति हो प्रभु, मूरति मोहन वेलडीजी;
मीठी हो प्रभु, मीठी ताहरी वाण,
लागे हो प्रभु, लागे जेसी सेलडीजी १

जाणुं हो प्रभु जाणुं जन्म कयत्थ,
जो हुं हो प्रभु, जो हुं तुम साथे मिल्योजी;
सुरमणि हो प्रभु, सुरमणि पाम्यो हत्थ,
आंगणे हो प्रभु, आंगणे मुज सुरतरु फल्योजी. २

जाग्या हो प्रभु, जाग्या पुण्य अंकुर,
माग्या हो प्रभु [1]मुहमाग्या पासा ढल्याजी.

[illegible]

[illegible] हो प्रभु, [illegible],
[illegible] हो प्रभु, [illegible]जी. ३
भुख्यां हो प्रभु, भुख्यां मळ्यां घृतपूर,
तरस्यां हो प्रभु, तरस्यां दिव्य उदक मिल्यांजी;
थाक्यां हो प्रभु, थाक्यां मिल्यां सुखपाल,
चाहतां हो प्रभु, चाहतां सज्जन हेजे हळ्यांजी. ४
दीवो हो प्रभु, दीवो निशा वन गेह,
साथी हो प्रभु, साथी[3] थळे, जळ नौका मळीजी;
कलियुगे हो प्रभु, कलियुगे दुलहो मुज,
दरिसण हो प्रभु, दरिसण लहुं आशा फळीजी. ५
वाचक हो प्रभु, वाचक यश तुम दास,
विनवे हो प्रभु, विनवे अभिनंदन सुणोजी;
[4]कहयें हो प्रभु, कहयें म देशो छेह,
देजो हो प्रभु, देजो सुख दरिसण तणोजी. ६

श्री मोहनविजयजी कृत स्तवन.

आछेलालनी देशी.

अकल कळा अविरुद्ध, ध्यान धरे प्रतिबुद्ध,
आछेलाल अभिनंदन जिनचंदनाजी;
रोमांचित थई देह, प्रगटयो पूरण नेह,
आ० चंद्र ज्युं वन अरविंदनाजी. १
अेक खीण मन रंग, परमपुरुषने संग,
आ० प्राप्ति होवे सो पामीअेजी;
सुगुण-सलूणी गोठ जिम साकर भरी पोठ,
आ० विण दामे विवसाइअेजी. २

---

१ आम्रवृक्ष. २ मरुभूमिमां. ३ पाठांतरः साथी हो प्रभु साथी थले जळ ना मिलीजी. ४ पाठांतरः कहीअे, कदिये

श्री मोहनविजयजी कृत स्तवन

[illegible] देशी

परम रस भीनो म्हारो, निपुण नगीनो म्हारो, साहिबो;
प्रभु मोरा पद्म प्रभु प्राणाधार हो, [illegible] साहिबो;
प्रभु मोरा [illegible] हो [illegible]
प्रभु मोरा तो श्री [illegible] हो. प० नि० १
निरभय पद पामवा पछे, प्र० जाणीओ नहि होवे हेत हो;
ते हेत साचो मानजो, प्र० [illegible] ते निःस्नेहलो. प० नि० २
पद लेतां तो लता निभु, प्र० पण [illegible] कल्याण हो;
अमे सूक्ष्म सुगुण नाथ, प्र० [illegible] जिणे [illegible] हो. प० नि० ३
तिहां रह्या करुणा नगनथी, प्र० जोतां शुं ओळखुं भाग हो?
जिहां तिहां जिनलावण्यता, प्र० देहली-दीपक न्याय हो. प० नि० ४
जो प्रभुता अमे पामता, प्र० कहेवुं न पडे तो ओम हो;
जो देशो तो जाणुं अमे, दरिसण दुर्लभता केम हो? प० नि० ५
हाथे तो नावी शकशो, प्र० न करो कोईनो विश्वास हो;
पण भोळवीओ जो भक्तिथी, प्र० कहेजो तो शाबाश हो. प० नि० ६
कमळलंछन कीधी मया, प्र० गुनाह करी बगसीस हो;
रूप विबुधनो मोहन भणी, प्र० पूरजो सकल जगीश हो प० नि० ७

---

७. श्री सुपार्श्वनाथ स्वामी.

श्री आनंदघनजी कृत स्तवन

राग सारंग तथा मल्हार, ललनानी—ओ देशी.

श्री सुपास जिन वंदिये, सुखसंपत्तिनो हेतु ललना;
शांत सुधारस जलनिधि, भवसागर मांहे सेतु ललना. श्री सु० १
सात महाभय टालतो, सप्तम जिनवर देव; ल०
सावधान मनसा करी, धारो जिनपद सेव. ल० श्री सु० २

शिवशंकर जगदीश्वरु, चिदानंद भगवान; ल०
जिन अरिहा तीर्थंकरु ज्योति स्वरूप असमान. ल० श्री सु० ३

अलख निरंजन वच्छलु, सकल जंतु-विसराम; ल०
अभयदान दाता सदा, पूरण आतमराम. ल० श्री सु० ४

वीतराग मद कल्पना, रति अरति भय सोगः ल०
निद्रा तंद्रा दुरदशा, रहित अबाधित योग. ल० श्री सु० ५

परम पुरुष परमातमा, परमेश्वर परधानः ल०
परम पदारथ परमेष्टि, परमदेव परमाण. ल० श्री सु० ६

विधि विरंची विश्वंभरु, हृषीकेश जगनाथ; ल०
अघहर अघमोचन धणी, मुक्तिपरमपद साथ. ल० श्री सु० ७

एम अनेक अभिधा धरे, अनुभवगम्य विचार. ल०
जे जाणे तेहने करे, आनंदघन अवतार. ल० श्री सु० ८

श्री देवचंद्रजी कृत स्तवन.

हे सुंदर ! तज [illegible]—ए देशी.

श्री सुपास आनंदमें, गुण अनंतनो कंद हो; जिनजी०
ज्ञानानंदे पूरणो, पवित्र चारित्रानंद हो. जि० सुपास० १

संरक्षण विण नाथ छो, द्रव्य विना धनवंत हो; जि०
कर्तापद किरिया विना, संत अजेय अनंत हो. जि० श्री सु० २

अगम अगोचर अमर तुं, अन्वय ऋद्धि समूह हो; जि०
वर्ण गंध रस फरस विण, निज भोक्ता गुणव्यूह हो. जि० श्री सु० ३

अक्षय दान अचिंतना, लाभ अयत्ने भोग हो. जि०
वीर्य शक्ति अप्रयासता, शुद्ध स्वगुण उपभोग हो. जि० श्री सु० ४

अति परचो विरचे नहि नित नित नवलो नवलो,
प्रभुजी मुजथी भासे हो राज;
अे प्रभुता अे निपुणता, परमपुरुष जे जेहवी,
किहांथी कोइ पासे हो राज. सा०

भीनो परम महारसे, माहरो नाथ नगीनो,
तेहने ते कुण निंदे हो राज;
समकित दृढता कारणे, रूपविबुधनो मोहन,
स्वामी सुपासने वंदे हो राज. सा०

---

८. चंद्रप्रभ स्वामी.

श्री आनंदघनजी कृत स्तवन.

राग केदारो तथा गोडी.

कुमरी रोवे आक्रंद करे, मुने कोइ मुकावे—अे देशी.

देखण दे रे सखि, मुने देखण दे, चंद्रप्रभ मुखचंद, सखि०
उपशम रसनो कंद स० सेवे सुर नर इंद. सखि०
गत कलिमल दुःख द्वंद्व सखि. मुने०

सुहम निगोदे न देखियो सखि० बादर अतिहि विशेष स०
पुढवी आउ न लेखियो स० तेउ वाउ न लेश स० मु०

वनस्पति अति घण दिहा स० दीठो नहीं य दीदार. स०
बिति-चउरिंदी जल लिहा स० गति सन्नि पण धार. स० मु०

सुर तिरि निरय निवासमां स० मनुज अनारज साथ. स०
अपज्जता प्रतिभासमां स० चतुर न चढियो हाथ. स० मु०

भाव सयोगी अयोगी शैलेशे, अंतिम दुग नय जाणोजी;
साधनताओ निज गुणव्यक्ति, तेह सेवना वखाणोजी. श्री० ८
कारण भाव ते अपवादे, कार्यरूप उत्सर्गेजी;
आतमभाव ते भाव द्रव्य पद, बाह्य प्रवृत्ति निसर्गेजी. श्री० ९
कारण भाव परंपर सेवन, प्रगटे कारज भावोजी;
कारज सिद्धे कारणता व्यय, शुचि परिणामिक भावोजी. श्री० १०
परम गुणी सेवन तन्मयता, निश्चय ध्याने ध्यावेजी;
शुद्धातम अनुभव आस्वादी, देवचंद्र पद पावेजी. श्री० ११

श्री यशोविजयजी कृत स्तवन.

धनरा ढोल–अे देशी.

चंद्रप्रभ जिन साहेबारे, तुमे छो चतुर सुजाण, मनना मान्या;
सेवा जाणो दासनीरे, देशो फळ निर्वाण. मनना मान्या.
आवो आवोरे चतुर सुखभोगी, कीजे वात अेकांत अभोगी;
गुण गोठे प्रगटे प्रेम, मनना मान्या १
ओछुंअधिकुं पण कहेरे, आसंगायत[1] जेह; म०
आपे फल जे अणकहेरे, गिरुओ साहेब तेह. म० २
दीन कह्या विण दानथीरे, दातानी वाधे माम; म०
जल दीअे चातक खीजवीरे, मेघ हुओ तिणे श्याम म० ३
'पीउ पीउ' करी तुमने जपुंरे, हुं चातक तुमे मेह; म०
अेक लहेरमां दुःख हरोरे, वाधे बमणो नेह. म० ४
मोडुं-वहेलुं आपवुं रे, तो शी ढील कराय? म०
वाचक यश कहे जगधणी रे, तुम तूठे सुख थाय. म० ५

---

1. रागी, प्रेमी.

कुसुम अक्षत वर वास सुगंधो, धूप दीप मन साखीरे;
अंग पूजा पण भेद सुणी अेम, गुरुमुख आगम भाखीरे. सु० ३
अेहनुं फल दोय भेद सुणीजे, अनंतर ने परंपररे;
आणापालण चित्तप्रसन्नी, मुगति सुगति सुर मंदिररे. सु० ४
फूल अक्षत वर धूप पइवो, गंध नैवेद्य फल जल भरीरे;
अंग अग्र पूजा मळी अडविध, भावे भविक शुभगति वरीरे. सु० ५
सत्तर भेद अेकवीस प्रकारे. अठोत्तर[1] शत भेदेरे;
भाव पूजा बहुविधि निरधारी, दोहग दुर्गति छेदेरे; सु० ६
तुरिय[2] भेद पडिवत्ति[3] पूजा, उपशम खीण सयोगीरे;
चउहा पूजा इम उत्तरज्झयणे,[4] भाखी केवल भोगीरे. सु० ७
अेम पूजा बहुभेद सुणीने, सुखदायक शुभ करणी रे;
भविक जीव करशे ते लेशे, आनंदघनपद धरणी रे. सु० ८

श्री देवचंद्रजी कृत स्तवन.

थारा महेला उपर मेह, झबुके बीजली हो लाल–अे देशी.

दीठो सुविधि जिणंद, समाधिरसे भर्यो हो लाल, स० १
भास्युं आत्मस्वरूप, अनादिनो विसर्यो हो लाल. अ०
सकल विभाव उपाधि, थकी मन ओसर्यो हो लाल, थ०
सत्ता साधन मार्ग, भणी अे संचर्यो हो लाल, भ० १
तुम प्रभु जाणंग रिति, सरव जग देखता हो लाल, स०
निज सत्ताअे शुद्ध, सहुने लेखता हो लाल, स०
पर परिणति अद्वेष, पणे उवेखता हो लाल, प०
भोग्य पणे निज शक्ति, अनंत गवेषता हो लाल. अ० २

---

१ अठोत्तरशत–१०८ प्रकारे. २ चोथो. ३ प्रतिपत्ति, अंगीकार. ४ उत्तराध्ययनमां.

पारिणामिक सत्ता तणो, अविर्भाव* विलास निवासरे;
सहज अकृत्रिम अपराश्रयी, निर्विकल्प ने निःप्रयासरे. मु० ६

प्रभुप्रभुता संभारतां, गातां करतां गुणग्रामरे;
सेवक साधनता वरे, निज संवर परिणति पामरे. मु० ७

प्रगट तत्त्वता ध्यावतां, निज तत्त्वनो ध्याता थायरे;
तत्त्वरमण एकाग्रता, पूरण तत्त्वे एह समायरे. मु० ८

प्रभु दीठे मुज सांभरे, परमातम पूर्णानंदरे;
देवचंद्र जिनराजना, नित्य वंदो पय अरविंदरे. मु० ९

श्री यशोविजयजी कृत स्तवन.

कर्म न छूटेरे प्राणिया–ए देशी.

तुमे बहुमैत्रीरे साहेबा, मारे तो मन एक;
तुम विण बीजोरे नवि गमे, ए मुज मोटीरे टेक.
श्री श्रेयांस कृपा करो. १

मन राखो तुमे सवितणां, पण किहां एक मळी जाओ;
ललचावो लख लोकने, साथी [1]सहज न थाओ. श्री० २

राग भरे जन मन रहो, पण तिहुं काल वैराग;
चित्त तुमारोरे समुद्रनो, कोइ न पामेरे ताग. श्री० ३

एवा शुं चित्त मेळव्युं, मेळव्युं पहेलां न कांइ;
सेवक निपट[2] अबुझ[3] छे, निर्वहेशो[4] तुमे सांइ. श्री० ४

निरागी शुं रे किम मिले, पण मळवानो एकांत;
वाचक यश कहे मुज मिल्यो, भक्ते[5] कामण तंत. श्री० ५

ग. १ साथे रहेनार, २ अत्यंत, ३ अजाण, ४ निभावशो, ५ भक्तिवडे.

चाहीने दीजे हो चरणनी चाकरी.
द्यो अनुभव अम साज; गि०
इम नवि कीजे हो साहिबाजी सांभळो,
कांइ सेवकने शिवराज. गि० सा० २

चूपशुं छाना हो खाहिवा न बेसीअे.
कांइ शोभा न लहेशो कोय; गि०
दास उद्धारो हो साहिबाजी आपनो,
ज्युं होवे सुजश सवाय गि० सा० ३

अरुण जो ऊगे हो साहिबाजी अंबरे,
नाशे तिमिर अंधार; गि०
अवर देव हो साहिबाजी किंकरा,
मिलियो तुं देव मुने सार. गि० सा० ४

अवर न चाहुं हो साहिबाजी तुम छते,
जिम चातक जळधार; गि०
षट्पद भीनो हो साहिबाजी प्रेमशुं,
तिम हुं हृदयमझार गि० सा० ५

मानराजने हो साहिबाजी अंते जइ वस्या,
शुं कहीअे तुम प्रीत; गि०
निपट निरागी हो जिनवर तुं सही,
अे तुम मोटी रीत. गि० सा० ६

त्रिभुवनी जे वानो हो किणने दाखवुं ?
श्री वासुपूज्य जिनराय; गि०
[illegible] आवी हो [illegible] सांभळो,
कांति मोहन आवे दाय गि० सा० ७

गच्छना भेद बहु नयण निहाळतां,
तत्त्वनी वात करतां न लाजे;
उदर-भरणादि निज काज करता थका,
मोह नडिया कलिकाल राजे. धार० ३
वचन निरपेक्ष व्यवहार जूठो कह्यो,
वचन सापेक्ष व्यवहार साचो;
वचन निरपेक्ष व्यवहार संसार फल,
सांभळी आदरी कांई राचो. धार० ४
देव गुरु धर्मनी शुद्धि कहो किम रहे,
किम रहे शुद्ध श्रद्धा न आणो;
शुद्ध श्रद्धान विणु सर्व किरिया करी,
छारपर लीपणुं तेह जाणो. धार० ५
पाप नहीं कोइ उत्सूत्र भाषण जिस्यो,
धर्म नहीं कोइ जग सूत्र सरिखो;
सूत्र अनुसार जे भविक किरिया करे,
तेहनुं शुद्ध चारित्र परीखो धार० ६
अेह उपदेशनो सार संक्षेपथी,
जे नरा चित्तमें नित्य ध्यावे;
ते नरा दिव्य बहु काळ सुख अनुभवी,
नियत आनंदघन राज पावे. धार०:७

श्री देवचंद्रजी कृत स्तवन

दीठी हो प्रभु दीठी जगगुरु तुज-अे देशी

मूरति हो प्रभु, मूरति अनंत जिणंद,
ताहरी हो प्रभु, ताहरी मुज नयणे वसीजी;
समता हो प्रभु, समता रसनो कंद,
सहेजे हो प्रभु, सहेजे अनुभव रस लसीजी. १

भविक जन हरखो रे, निरखी शांति जिणंद भ०
उपशम रसनो कंद, नहि इण सरिखोरे-ए आंकणी. १

प्रातिहारज अतिशय शोभा वा० ते तो कहिय न जावे रे;
घूक[1] बालकथी रविकरभरनुं, वर्णन केणीपरे थावे रे. भ० २

वाणी गुण पांत्रीस अनोपम वा० अविसंवाद सरूपे रे;
भवदुःखवारण शिवसुखकारण, शुद्धो धर्म प्ररूपे रे भ० ३

दक्षिण पश्चिम उत्तर दिशि मुख वा० ठवणा जिन उपगारी रे;
तसु आलंबन लहिय अनेक, तिहां थया समकितधारी रे. भ० ४

षट नय कारजरूपे ठवणा वा० सग नय कारण ठाणी रे;
निमित्त समान थापना जिनजी, ए आगमनी वाणी रे भ० ५

साधक तिन निक्षेपा मुख्य वा० जे विण भाव न लहिये रे;
उपगारी दुग भाष्ये भाख्या, भाव वंदकनो ग्रहीये रे भ० ६

ठवणा समवसरणे जिन सेती वा० जो अभेदता वाधी रे;
ए आतमना स्वभाव गुण, व्यक्त योग्यता साधी रे. भ० ७

भलुं थयुं में प्रभु गुण गाया वा० रसनानो फळ लीधो रे;
देवचंद्र कहे मारा मननां, सकळ मनोरथ सीधा रे. भ० ८

तुजथी अवर न कोय अधिक जगति तळे ल०
जेहथी चित्तनी वृत्ति अेकांगी जइ मळे ल०
दिजे दरिशन वार घणी न लगावीअे ल०
वातलडी अति मीठी ते किम विरमावीअे ? ल० ३

तुं जो जळ तो हुं कमळ, कमळ तो हुं वासना ल०
वासना तो हुं भ्रमर न मूकुं आसना ल०
तुं छोडे पण हुं केम छोडुं ? तुज भणी ल०
लोकोत्तर कोइ प्रीत आवी तुजथी बनी ल० ४

धुरथी ज्ञाने समकित दइने भोळव्यो ल०
हवे केम जाउं खोटे दिलासे ओळव्यो ? ल०
जाणो खासो दास विमासो छो किशुं ? ल०
अमे पण खोजमत मांही के खोटा किम थशुं ? ल० ५
बीजी खोटी वाते अमे राचुं नहीं ल०
में तुज आगळ माहरी मनवाळी कही ल०
पूरण राखो प्रेम विमासो शुं तमे ? ल०
अवसर लही अेकांत विनवीअे छीअे अमे ल० ६

अंतरजामी स्वामी अचिरानंदना ल०
शांतिकरण श्री शांतिजी मानजो वंदना ल०
तुज स्तवनाथी तनमन आनंद उपन्यो ल०
कहे मोहन मन रंग सुपंडित रूपनो ल० ७

२

राग सारंग

शांतिजिणंद महाराज, जगतगुरु, शांतिजिणंद महाराज;
—[illegible]रानंदन भविमनरंजन, गुणनिधि गरीबनिवाज. ज०

जे जे कहुं ते कान न धारे, आप मते रहे कालो;
सुरनर पंडितजन समजावे, समजे न मारो सालो[1] हो. कुं० ६

मैं जाण्युं ए लिंग नपुंसक, सकल मरदने ठेले;
बीजी वाते समरथ छे नर, एहने कोई न झेले हो. कुं० ७

मन साध्युं तेणे सघळुं साध्युं, एह वात नहि खोटी;
एम कहे साध्युं ते नवि मानुं, ए कही वात छे मोटी हो. कुं० ८

मनडुं दुराराध्य तें वश आण्युं, आगमथी मति आणुं;
आनंदघन प्रभु मारुं आणो, तो साचुं करी जाणुं हो. कुं० ९

श्री देवचंद्रजी कृत स्तवन.

चरम जिणंद–ए देशी

समवसरण बेसी करी रे, बारह परिषदमांहि;
वस्तुस्वरूप प्रकाशता रे, करुणाकर जगनाहो रे, कुंथुजिनेसर. १

निर्मल तुज मुख वाणी रे, जे श्रवणे सुणे;
तेहिज गुणमणि खाणी रे कुं०

गुण पर्याय अनंतता रे, वली स्वभाव अगाह;
नय गम भंग निक्षेपना रे, हेयादेय प्रवाहो रे. कुं० २

कुंथुनाथ प्रभु देशना रे, साधन साधक सिद्धि;
गौण मुख्यता वचनमां रे, ज्ञान ते सकल समृद्धि रे. कुं० ३

वस्तु अनंत स्वभाव छे रे, अनंत कथक तसु नाम;
ग्राहक अवसर बोधथी रे, कहेवे अर्पित कामो रे. कुं० ४

---

१ कुमति स्त्रीनो भाइ.

शुद्धातम अनुभव सदा, स्वसमय अेह विलास रे;
परवडी छांयडी जेह पडे, ते परसमय निवास रे. ध० २

तारा नक्षत्र ग्रह चंदनी. ज्योति दिनेश मझार रे;
दर्शन ज्ञान चरण थकी, शक्ति निजातम धार रे. ध० ३

भारी पीळो चीकणो, कनक अनेक तरंग रे;
पर्यायदृष्टि न दीजीअे, अेकज कनक अभंग रे. ध० ४

दरशन ज्ञान चरण थकी, अलख सरूप अनेक रे;
निर्विकल्प रस पीजीअे, शुद्ध निरंजन अेक रे. ध० ५

परमारथ पंथ जे कहे, ते रंजे अेक तंत रे;
व्यवहारे लख जे रहे, तेहना भेद अनंत रे. ध० ६

व्यवहारे लखे दोहिला, कांई न आवे हाथ रे;
शुद्ध नय थापना सेवतां, नवि रहे दुविधा साथ रे. ध० ७

अेकपखी लखी प्रीतिनी, तुम साथे जगनाथ रे;
कृपा करीने राखजो, चरण तळे ग्रही हाथ रे. ध० ८

चक्री धरम तीरथतणो, तीरथ फळ ततसार[1] रे;
तीरथ सेवे ते लहे, आनंदघन निरधार रे. ध० ९

श्री आनंदघनजी कृत स्तवन

[illegible]

प्रणमो श्रीअरनाथ, शिवपुर साथ खरो री;
त्रिभुवन जन आधार, भवनिस्तार करो री. १

पुष्ट हेतु अरनाथ, तेहने गुणथी हळीअे;
रीझ भक्ति बहुमान, भोग ध्यानथी मळीअे. १३

मोटाने उत्संग, बेठाने शी चिंता;
तिम प्रभु चरण पसाय, सेवक थया निर्चिंता. १४

अरप्रभु प्रभुता रंग अंतर शक्ति विकासी;
देवचंद्रने आनंद, अक्षय भोग विलासी. १५

श्री यशोविजयजी कृत स्तवन.

आसणरा योगी–अे देशी

श्री अरजिन भवजलनो तारु, मुज मन लागे वारुरे;
मन मोहन स्वामी.

बांह्य ग्रही अे भवजल तारे*, आणे शिवपुर आरे रे मन० १

तप जप मोह महा तोफाने. नाव न चाले माने रे; मन०
पण नवि भय मुज हाथोहाथे, तारे ते छे साथे रे. मन० २

भगतने स्वर्ग स्वर्गथी अधिकुं, ज्ञानीने फल देइ रे; मन०
काया कष्ट विना फल लहीअे, मनमां ध्यान धरेई रे. मन० ३

जे उपाय बहुविधनी रचना, योगमाया ते जाणो रे; मन०
शुद्ध द्रव्य गुण पर्याय ध्याने, शिव दिये प्रभु सपराणो रे मन० ४

प्रभुपद वलग्या ते रह्या ताजा, अलगा अंग न साजा रे; मन०
वाचक यश कहे अवर न ध्याउं, अे प्रभुना गुण गाउं रे. मन० ५

---

* पाठांतरः भविजन तारे.

पाणी खीरने मेळे हो कोण मेळे अेकांत लोई रही,
कांई नहीं रे मिलनको जोग;
जो प्रभु देवुं नगणे हो कदी लगणे समजावुं सही.
कांई ते न मिले संजोग. अ० ६
मनमेलु किम कीजे हो शुं कीजे अंतराय अेवडो.
कांई निपट नहेजा नाश;
सातराजने अंते हो कोण पामे ते जानीने मलुं,
कांई विकट तुमारोजी पाथ. अ० ७
ओळग अे अनुभवनी हो मुज मननी वार्ता सांभळी,
कांई कीजे आजे निवाज;
रूप विबुधनो मोहन हो मनमोहन सांभळ विनति,
कांई दीजे शिवपुर राज. अ० ८

---

१९. श्री मल्लिनाथस्वामी

श्री आनंदघनजी कृत स्तवन.

राग–काफी

सेवक किम अवगणिये हो मल्लिजिन, अेह अब शोभा सारी;
अवर जेहने आदर अति दीअे, तेहने मूल निवारी. हो म० १
ज्ञान स्वरूप अनादि तमारुं, ते लीधुं तमे ताणी;
जुओ अज्ञान दशा रीसावी जातां काण न आणी. हो म० २
निद्रा सुपन जागर उजागरता [१]तुरिय अवस्था आवी;
निद्रा सुपन दशा रीसाणी, जाणी न नाथ मनावी. हो म० ३
समकित साथे सगाई कीधी, सपरिवारशुं गाढी;
मिथ्यामति अपराधण जाणी, घरथी बाहिर काढी. हो म० ४

---

१ चोथी.

जो कोई राखे राग निराग न राखीअे हो लाल, नि०
गुण अवगुणनी वात करी प्रभु दाखीअे हो लाल. क० ४
अमचा[1] दोप हजार तिके[2] मत भाळजो हो लाल, ति०
तुमे छो चतुरसुजाण प्रीतम गुण पाळजो हो लाल; प्री०
मल्लिनाथ महाराज म राखो आंतरो हो लाल, म०
द्यो दरिसण दिलधार, मिटे ज्युं आंतरो हो लाल. मि० ५
मन मंदिर महाराज विराजो दिल मळी हो लाल, वि०
चंदातप जिम कमळ हृदय विकसे कळी हो लाल; हृ०
रूप विबुध सुपसाय करो अम रंग रळी हो लाल, क०
कहे मोहन कविराय सकळ आशा फळी हो लाल स० ६

---

२०. श्री मुनिसुव्रत स्वामी.

श्री आनंदघनजी कृत स्तवन.

राग काफी, आघा आम पधारो पूज्य-अे देशी.

मुनिसुव्रत जिनराय, अेक मुज विनति निसुणो,
आ त म त त्त्व क युं जा ण्यु ज ग त गु रु,
अे ह वि चा र मु ज क हि यो;
आ त म त त्त्व जा ण्या वि ण निर्मल,
चित्त समाधि नवि लहियो. मुनि० १
कोई अबंध आतमतत्त[3] माने, किरिया करतो दीसे;
किया तणुं फल कहो कुण भोगवे, इम पूछ्युं चित्त रीसे. मु० २
जड चेतन अे आतम अेकज, स्थावर जंगम सरीखो;
दुःख सुख शंकर दूपण आवे, चित्त विचारी जो परिखो मु० ३

---

१ अमारा. २ तेमने. ३ आत्मतत्व.

श्री मोहनविजयजी कृत स्तवन.

हो पीउ पंखीडा–ए देशी

हो प्रभु मुज प्यारा न्यारा थया केइ रीत जो,
ओळगुआने आलालुंभन ताहरो रे लो;
हो० भक्तवच्छल भगवंत जो,
आइ वसो मन मंदिर साहिब माहरे रे लो. १
हो० खीण न वीसरुं तुज जो,
तंबोळीना पत्र तणी पेरे फेरतो रे लो;
हो० लागी मुजने (ताहरी) माया जोरजो.
दीणयरवासी सुसाहिब तुमने हेरतो रे लो. २
हो० तुं निःसनेही जिनराय जो,
ओकपखी प्रीतलडी किणपरे राखीओ रे लो;
हो० अंतरगतिनी महाराज जो.
वातलडी विण साहिब केहने दाखीओ रे लो. ३
हो० अलख रूप थई आप जो,
जाइ वस्यो शिवमंदिर मांहे तुं जई रे लो;
हो० लाध्यो तुमारो भेद जो,
शुद्ध सिद्धांतगतिने साहिब तुमे लही रे लो. ४
हो० जगजीवन जिनराय जो.
मुनिसुव्रत जिन सुणजो मानजो माहरा रे लो;
हो० पग प्रणमुं जिनराज जो,
भव भव शरणो साहिब स्वामी ताहरो रे लो. ५
हो० राखजो हृदय मोझार जो,
अरजी आसंगीआ जो पकडी ताहरी रे लो;
हो० रूपविजयनो शिष्य जो,
मोहन मन लागी माया ताहरी रे लो. ६

श्री देवचंद्रजी कृत स्तवन

पिछोलारी पाल, उभा दोय राजवी रे–ओ देशी

श्री नमि जिनवर सेव, घनाघन उनम्यो रे; घ०
दीठां मिथ्यारोर,[1] भाविक चित्तथी गम्यो[2] रे; भा०
शुचि आचरणा रीति, ते अभ्र वधे वडा रे, ते०
आतम परिणति शुद्ध, ते वीज झबुकडा रे. ते० १

वाजे वाय सुवाय, ते पावन भावना रे, ते०
इंद्र धनुष त्रिक योग, ते भक्ति इकमनारे; ते०
निर्मळ प्रभु–स्तवघोष, ध्वनि घनगर्जना रे, ध्व०
तृष्णा ग्रीष्म काळ, तापनी तर्जना रे. ता० २

शुभ लेश्यानी आलि, ते बगपंक्ति बनी रे, ते०
श्रेणी सरोवर हंस, वसे शुचि गुण मुनि रे; व०
चउगति मारग बंध, भविक जन घर रह्या रे. भ०
चेतन समता संग, रंगमें उमह्या रे. र० ३

सम्यग्दृष्टि मोर, तिहां हरखे घणुं रे. ति०
देखी अद्भुत रूप, परम जिनवर तणुं रे; प०
प्रभुगुणनो उपदेश, ते जलधारा वही रे, ते०
धरम रुचि चित्त भूमि, मांहि निश्चल रही रे. मां० ४

चातक श्रवण समूह, करे तव पारणो रे. क०
अनुभव रस आस्वाद, सकल दुःख वारणो रे; स०
अशुभाचार निवारण, तृण अंकुरता रे. तृ०
विरतितणां परिणाम, ते बीजनी पूरतारे, ते० ५

पंच महाव्रत धान्य, तणां कर्षण वध्यां रे. त०
साध्यभाव निज थापी, साधनताओ सध्यां रे; सा०

---

१. मिथ्यात्वरूपी दुकाळ. २ गयो.

क्षायिक दरिसण ज्ञान, चरण गुण उपन्या रे. च०
आदिक बहु गुण सस्य, आतम घर नीपन्या रे. आ० ६
प्रभु दरिसण महामेह, तेणे परवेशमें रे. ते०
परमानंद सुभिक्ष. थया मुज देशमें रे: थ०
देवचंद्र जिनचंद्र, तणो अनुभव करो रे. त०
सादि अनंतो काळ. आतमसुख अनुसरो रे. आ० ७

सुनजर करशो तो वरशो वडाइ,
शुं कहेशे प्रभुने लडाइ रे; सु०
तुमे अमने करशो मोटा,
कुण कहेशे प्रभु तुमे छोटा रे? सु० २
निःशंक थइ शुभ वचन कहेशो,
जग शोभा अधिकी लहेशो रे; सु०
अमे तो रह्या छिये तमने राची,
रखे आप रहो मन कांचीरे. सु० ३
अमे तो कीशुं अंतर नवी राखुं,
जे होवे हृदय कही दाखु रे; सु०
गुणी जन आगळ गुण कहेवाये,
जे वारे प्रीत प्रमाणे थाये रे. सु० ४
विषधर[1] ईशहृदये[2] लपटाणो,
तेहवो अमने मिळयो छे टाणो रे. सु०
निरवहेशो जो प्रीत अमारी,
कळि[3] कीरत थाशे तमारी रे. सु० ५
धुत्ताइ चित्तडे नवि धरशो,
कांइ अवळो विचार न करशो रे; सु०
जिमतिम करी सेवक जाणजो,
अवसर लही शुद्ध लहेजो रे. सु० ६
आ समे कहीअे छीअे तुमने,
प्रभु दीजे दिलासो अमने रे; सु०
मोहनविजय सदा मनरंगे,
चित्त लाग्यो प्रभुने संगे रे. सु० ७

सर्प. २ शंकरनी छाती उपर. ३ कळिकाळमां.

रागीशुं रागी सहु रे, वैरागी श्यो राग; म०
राग विना किम दाखवो रे, मुक्ति सुंदरी माग? म० ११
अेक गुह्य घटतुं नथी रे, सघलोई जाणे लोक; म०
अनेकांतिक भोगवो रे, ब्रह्मचारीगत रोग. म० १२
जिण जोणि[1] तुमने जोउं रे, तिण जोणि जोवो राज; म०
अेकवार मुजने जुओ रे, तो सीझे मुज काज. म० १३
मोहदशा धरी भावना रे, चित्त लहे तत्त्वविचार; म०
वीतरागता आदरी रे, प्राणनाथ निरधार. म० १४
सेवक पण ते आदरे रे, तो रहे सेवक माम[2]; म०
आशय साथे चालीअे रे, अेहीज रुडुं काम. म० १५
त्रिविध योग धरी आदर्यो रे नेमिनाथ भरतार; म०
धारण पोषण तारणो रे, नवरस मुक्ताहार. म० १६
कारणरुपी प्रभु भज्यो रे गण्यो न काज अकाज; म०
कृपा करी मुज दीजीअे रे, आनंदघन पदराज. म० १७

श्री देवचंद्रजी कृत स्तवन

पद्मप्रभ जिन जई अलगा वस्या–अे देशी

नेमि जिणेसर निज कारज कर्युं, छांडयो सर्व विभावोजी;
आतमशक्ति सकल प्रगट करी, आस्वाद्यो निज भावोजी ने० १
राजुल नारी रे सारी मति धरी अवलंब्या अरिहंतोजी;
उत्तम संगे रे उत्तमता वधे, सधे आनंद अनंतोजी ने० २
धर्म अधर्म आकाश अचेतना, ते विजाति अग्राह्योजी;
पुद्‌गल ग्रहवेरे कर्म कलंकता, बाधे बाधक बाह्योजी. ने० ३

१. २ लाज.

प्रीत करंतां गोहिली रे हां,
निरखतों अंजाळ; मे०
जेहनो व्याल[1] गेलागो रे हां,
जेहनी जगननी झाळ. मे० तो० ४

जो विवाह अवसरे दिओ रे हां,
हाथ उपर नहि हाथ; मे०
दीक्षा अवसर दीजीओ रे हां,
शिर उपर जगनाथ मे० तो० ५

इम विलवती राजुल गइ रे हां,
नेमि कने व्रत लीध; मे०
वाचक यश कहे प्रणमिये रे हां,
ओ दंपती दोय सिद्ध. मे० तो० ६

श्री मोहनविजयनी कृत स्तवन.

दक्षिण दोहिलो हो राज-ओ देशी.

कां रथ वाळो हो राज, सामुं निहाळो हो राज,
प्रीत संभारो रे वाल्हा यदुकुळ सेहरा;
जीवन मीठा हो राज, मत होजो धीठा हो राज,
दीठा अळजे रे वहाला निवहो नेहरा. १

नवभव भज्जा हो राज, तीहां शी लज्जा हो राज?
तजत भज्जा रे कांसे रणका वाजीआ;
शीवादेवी जाया हो राज, मानी ल्यो माया हो राज.
कीमहिक पायारे वहाला मधुकर राजीआ. २

[1] सर्प.

सर्वव्यापी कहो सर्व जाणंगपणे, परपरिणमन सरूप; सु०
पररूपे करी तत्त्वपणुं नहीं, स्वसत्ता चिद्रूप. सु० ध्रु० २

ज्ञेय अनेके हो ज्ञान अनेकता, जलभाजन रवि जेम; सु०
द्रव्य अेकत्वपणे गुणअेकता, निजपद रमता हो खेम. सु० ध्रु० ३

परक्षेत्रे गत ज्ञेयने जाणवे, परक्षेत्रे थयुं ज्ञान; सु०
अस्तिपणुं निज क्षेत्रे तुमे कह्युं, निर्मलता गुण मान. सु० ध्रु० ४

ज्ञेय विनाशे हो ज्ञान विनश्वरु, काळप्रमाणे रे थाय; सु०
स्वकाळे करी स्वसत्ता सदा, ते पर रीते न जाय. सु० ध्रु० ५

परभावे करी परता पामता, स्वसत्ता थिर ठाण; सु०
आत्म चतुष्कमयी परमां नहीं, तो किम सहुनो रे जाण. सु० ध्रु० ६

अगुरुलघु निज गुणने देखतां, द्रव्य सकल देखंत; सु०
साधारण गुणनी साधर्म्यता, दर्पण जलने दृष्टांत. सु० ध्रु० ७

श्री पारसजिन पारस रस समो, पण इहां पारस[1] नांहि, सु०
पूरणरसीओ हो निज गुण परसनो[2] आनंदघन मुज मांहि. सु० ध्रु० ८

२

शांतिजिन एक मुज विनंति—अे देशी.

पासजिन ताहरा रूपनुं, मुज प्रति भास केम होय रे,
तुज मुज सत्ता अेकता, अचल विमल अकल जोय रे. पास० १
मुज प्रवचन पक्षथी, निश्चय भेद न कोय रे;
व्यवहारे लखि देखीअे, भेद प्रतिभेद बहु लोय रे. पास० २
बंधु न मोक्ष नहीं निश्चये, व्यवहारे भज दोय रे;
अखंडित अबाधित सोय कदा, नित अबाधित सोय रे. पास० ३

१ पाषाणरूप पारस नहीं. २ आतमगुणरूप पारसनो.

श्री देवचंद्रजी कृत स्तवन

कडखानी देशी

सहज गुण आगरो, स्वामी सुखसागरो,
ज्ञान वयरागरो* प्रभु सवायो;
शुद्धता, अेकता, तीक्ष्णता भावथी,
मोहरिपु जीती जय पडह वायो. स० १

वस्तु निज भाव, अविभास निकलंकता,
परिणति वृत्तिता करी अभेदे;
भाव तादात्म्यता शक्ति उल्लासथी,
संतति योगने तुं उच्छेदे. स० २

दोष गुण वस्तुनी, लखिय यथार्थता,
लही उदासीनता अपर भावे;
ध्वंसि तज्जन्यता भाव कर्तापणुं,
परम प्रभु तुं रम्यो निज स्वभावे. स० ३

शुभ अशुभ भाव, अविभास तहकीकता,
शुभअशुभ भाव तिहां प्रभु न कीधो;
शुद्ध परिणामता, वीर्य कर्ता थई,
परम अक्रियता अमृत पीधो. स० ४

शुद्धता प्रभु तणी आत्मभावे रमे,
परम परमात्मता तास थाये;
मिश्र भावे अछे त्रिगुणनी भिन्नता,
त्रिगुण अेकत्व तुज चरण आये. स० ५

---

* वयरागरो=वज्राकर; ज्ञानरूप वज्र-रत्ननी खाण. खजानो; केवलज्ञान निधान.

मंत्रमांहि नवकार, रत्नमांहि सुरमणि रे, के० रत्न०
सागरमांहि स्वयंभूरमण शिरोमणि रे; के० सा०
शुक्ल ध्यान जिम ध्यानमां, अति निर्मलपणे रे, के० अ०
श्रीनय विजय विबुध पय, सेवक इम भणे रे, के० से० ३

श्री मोहनविजयजी कृत स्तवन

कानुडो गेण नजाणेरे, काली नदीने कांठे-ओ देशी.

वामानंदन हो प्राण थकी छो प्यारा,
नांही कीजे हो नयणथकी क्षण न्यारा;
पुरिसादाणी शामळ वरणो, शुद्ध समकितने भासे;
शुद्ध पुंज जिणे कोधो तेहने, उज्ज्वळ वरण प्रकाशे. वा० १
तुम चरणे विषधर पिण निरविष, दंसणे[1] थाये विडोजा;[2]
जोतां अम शुद्ध स्वभाव कां न हुवे, अेह अमे ग्रह्या छोजा. वा० २
कमठराय मद किण गिणतिमां, मोहतणो मद जोतां;
ताहरी शक्ति अनंती आगळ, केई केई मर गया गोतां. वा० ३
तें जिम तार्या तिम कुण तारे, कुण तारक कहुं अेहवो;
सायरमान ते सायर सरिखो, तिम तुं पिण तुं जेहवो. वा० ४
किमपि न वेसो तुमे करुणाकर, तेह मुज प्राप्ति अनंती;
जेम पडे कण कुंजरमुखथी, कीडी बहु धनवंती. वा० ५
अेक आवे अेक मोजां पावे, अेक करे ओळगडी;
निजगुण अनुभव देवा आगळ, पडखे नहीं तु वे घडी. वा० ६
जेहवी तुमथी माहरी माया, तेहवी तुमे पिण धरजो;
मोहनविजय कहे कवि रूपनो, परतक्ष करुणा करजो. वा० ७

---

१ दर्शनथी. २ इन्द्र.

सूक्ष्मनाम करम निराकार जे रे, तेह भेदे नहीं अंत;
निराकार जे निरगति कर्मथी रे, तेह अभेद अनंत. चरम० ३

रूप नहीं कबुहें बंधन घट्युं रे, बंधन मोक्ष न कोय;
बंध मोक्ष विण सादि अनंतनुं रे, भंग संग केम होय! चरम० ४

द्रव्य विना तेम सत्ता नवि लहे रे, सत्ता विण शो रूप;
रूप विना केम सिद्ध अनंतता रे, भावुं अकल स्वरूप. चरम० ५

आतमता परिणति जे परिणम्या रे, ते मुज भेदाभेद;
तदाकार विण मारा रूपनुं रे, ध्यावुं विधिप्रतिषेध. चरम० ६

अंतिम भवग्रहणे तुज भावनुं रे, भावशुं शुद्ध स्वरूप;
तइयें आनंदघन पद पामशुं रे, आतमरूप अनूप. चरम० ७

२

वीर जिनेश्वर परमेश्वर जयो, जग जीवन जिन भूप;
अनुभव मित्तेरे चित्ते हित करी, दाख्युं तास स्वरूप. वीर० १

जेह अगोचर मानस वचनने, तेह अतींद्रिय रूप;
अनुभव मित्तेरे व्यक्ति शक्तिशुं, भाख्युं तास स्वरूप. वीर० २

नय निक्षेपेरे जेह न जाणिये, नवि जीहां प्रसरे प्रमाण;
शुद्ध स्वरूपे ते ब्रह्म दाखवे, केवळ अनुभव भाण. वीर० ३

अलख अगोचर अनुपम अर्थनो, कोण कही जाणे रे भेद;
सहज विशुद्धेरे अनुभव वयण जे, शास्त्र ते सघलोरे खेद, वीर० ४

दिशि देखाडीरे शास्त्र सवि रहे न लहे अगोचर वात;
साधक बाधक रहित जे, अनुभव मित्त विख्यात. वीर० ५

स्वामी गुण ओळखी, स्वामीने जे भजे,
दरिशण शुद्धता तेह पामे;
ज्ञान चारित्र तप वीर्य उल्लासथी,
कर्म झीपी वसे मुक्ति धामे. ता० ५

जगत वत्सल महावीर जिनवर सुणी,
चित्त प्रभु चरणने शरण वास्यो;
तारजो बापजी बिरुद निज राखवा,
दासनी सेवना रखे जोशो ता० ६

विनति मानजो शक्ति ए आपजो,
भाव स्याद्वादता शुद्ध भासे;
साधी साधक दशा. सिद्धता अनुभवी,
देवचंद्र विमल प्रभुता प्रकाशे. ता० ७

कळश

चोवीशे जिनगुण गाईओ, ध्याईओ तत्त्वस्वरूपोजी;
परमानंद पद पाईओ, अक्षय ज्ञान अनूपोजी. चो० १

चवदहसें बावन भला, गणधर गुण भंडारोजी;
समतामयी साहु साहुणी, सावय श्राविका सारोजी. चो० २

वर्द्धमान जिनवर तणो, शासन अति सुखकारोजी;
चउविह संघ विराजतां, दुसम काल आधारोजी. चो० ३

जिन सेवनथी ज्ञानता, लहे हिताहित बोधोजी;
अहित त्याग हित आदरे, संयम तपनी शोधोजी. चो० ४

अभिनव कर्म अग्रहणता जीर्ण कर्म अभावोजी;
निःकर्मीने अबाधता, अवेदन अनाकुल भावोजी. चो० ५

आदरांगना चितमधी, अचल अक्षय निराबाधोजी;
पूर्णानंद दशा लही, विलसे सिद्ध समाधोजी. श्री० ६

श्री जिनचंद्रनी सेवना, प्रगटे पुण्य प्रधानोजी;
पूर्ण सागर अति उल्लसे, साधुरंग प्रभु ध्यानोजी. श्री० ७

[illegible] खरतर गच्छपति, राजसागर उवझायोजी;
ज्ञान धर्म पाठक तणो, शिष्य सुजस सुखदायोजी. श्री० ८

दीपचंद्र पाठक तणो, शिष्य स्तवे जिनराजोजी;
देवचंद्र पद सेवतां, पूर्णानंद समाजोजी. श्री० ९

श्री मोहनविजयजी कृत स्तवन.

पछेडानी देशी

दुर्लभ भव लही दोहिलो रे, कहो तरीअे कवण उपाय रे;
प्रभुजीने वीनवुं रे;
समकित साचा साचवुं रे, ते करणी किम थाय रे. प्र० १

अशुभ मोह जो मेटीअे रे, कांइ शुभ प्रभुने जाय रे; प्र०
निरागे प्रभु ध्याइअेरे, कांइ तो पिण राग कहाय रे. प्र० २

नाम ध्यातां जो ध्याइअेरे, कांइ प्रेम विना नवि तान रे; प्र०
मोह विकार जिहां तिहां रे, कांइ किम तरीअे गुणधाम रे. प्र० ३

मोह बंधज बांधीओ रे, कांइ बंध जहां नहीं सोय रे; प्र०
कर्म बंध न कीजीअे रे, कर्मबंधन गये जोय रे. प्र० ४

तेहमां शो पाड चडावीअे रे. कांइ तुमे श्री महाराज रे; प्र०
विण करणी जो तारशो रे, कांइ साचा श्री जिनराज रे. प्र० ५

प्रेम मगन नीभावता रे, कांइ भाव तिहां भवनाश रे; प्र०
भाव तिहां भगवंत छे रे, कांइ उपदिशे आतम सास रे. प्र० ६

पूरण घटाभ्यंतर भर्या रे, कांई अनुभव अनुहार रे; प्र०
आतम ध्याने ओळखी रे, कांई तरशुं भवनो पार रे. प्र० ७

वर्धमान मुज विनति रे, कांई मानजो निशदिश रे; प्र०
मोहन कहे मनमंदिरे रे, कांई वसियो तुं विश्वावीश रे प्र० ८

हुं मागुं छुं प्रभु. मुज अपराधनी माफी;
करी दीओ पापथी मुक्त, कहुं नही फांसी.

ओ अभिलाषा अविनाशी, पूरण करजो;
मुज दोष दयानिधि, देव, दीले नहि धरजो.

हुं पापनो पश्चात्ताप हवे करुं छुं;
वळी सूक्ष्म विचारथी, सदा ऊंडो उतरुं छुं.

तुम तत्त्वचमत्कृति, नजरे तूर्त तरे छे;
ओ मुज स्वरूपनो, विकास नाथ करे छे.

छो आप निरागी, अनंत ने अविकारी;
वळी स्वरूप सत् चिदानंद गणुं सुखकारी.

छो सहजानंदी, अनंतदर्शी ज्ञानी;
त्रैलोक्यप्रकाशक, नाथ, शुं आपुं निशानी?

मुज हित अर्थे दउं, साक्षी मात्र तमारी;
हुं क्षमा चाहुं, मति सदा आपजो सारी.

तुम प्रणीत तत्त्वमां, शंकाशील न थाउं;
जे आप बतावो, मार्ग त्यांज हुं जाउं.

मुज आकांक्षाने, वृत्ति अेवी नित्य थाजो;
लइ शकुं जेथी हुं महद् मुक्तिनो लावो.

हे ! सर्वज्ञ प्रभु शुं विशेष कहुं हुं तमने;
नथी लेश अजाण्युं आपथी निश्चय मुजने.

केवळ पश्चात्तापथी दील दहुं छुं;
मुज कर्मजन्य पापनी क्षमा चाहुं छुं.

ॐ शांति शांति, करो कृपाळु शांति;
गुरुराजचंद्र जिन वचन हरो मम भ्रांति.

मिथ्या मोह अज्ञानको, भरियो रोग अथाग;
वैद्यराज गुरु शरणथी, औषध ज्ञान विराग. ११

जे में जीव विराधिया सेव्यां पाप अढार;
प्रभु तुमारी साखसें, वारंवार धिक्कार. १२

बुरा बुरा सबको कहे, बुरा न दीसे कोइ;
जो घट शोधे आपनो, मोसुं बुरा न कोइ. १३

कहेवामां आवे नहि, अवगुण भर्या अनंत;
लिखवामां क्युं कर लिखुं, जाणो श्री भगवंत. १४

करुणानिधि कृपा करी, कर्म कठिन मुज छेद;
मिथ्या मोह अज्ञानको, करजो ग्रंथि भेद १५

पतितउद्धारन नाथजी, अपनो बिरुद विचार;
भूलचूक सब माहरी, खमीए वारंवार. १६

माफ करो सब माहरा, आज तलकना दोष;
दीनदयालु दो मुझे, श्रद्धाशील संतोष. १७

आत्मनिंदा शुद्ध भनी, गुनवंत वंदन भाव;
रागद्वेष पतला करी, सबसें खीमत खीमाव* १८

छूटुं पिछलां पापसें, नवां न बांधुं कोइ;
श्री गुरुदेवप्रसादसें, सफल मनोरथ होई. १९

परिग्रह ममता तजी करी, पंच महाव्रत धार;
अंत समय आलोयना, करुं संथारो सार. २०

तीन मनोरथ ए कह्या, जो ध्यावे, नित मन;
शक्ति सार वर्ते सही, पावे शिवसुख धन २१

अरिहा देव, निर्ग्रंथ गुरु, संवर निर्जर धर्म;
आगम श्री केवलि कथित, एही जैन मत मर्म. २२

आरंभ विषय कषाय तज, शुद्ध समकित व्रत धार;
जिनआज्ञा परमाण कर, निश्चय खेवो पार. २३

* [illegible]

रतन बंध्यो गठडी विषे, सूर्य छिप्यो घनमांही;
सिंह पिंजरामें दियो, जोर चले कछु नांही. ८

ज्युं बंदर मदिरा पिया, विछु डंकीत गात;
भूत लग्यो कौतुक करे, कर्मोका उत्पात. ९

कर्म संग जीव मूढ है, पावे नाना रूप;
कर्म रूप मलके टले, चेतन सिद्ध सरूप. १०

शुद्ध चेतन उज्ज्वल दरव,[१] रह्यो कर्म मल छाय;
तप संयमसें धोवतां, ज्ञानज्योति वढ जाय.[२] ११

ज्ञान थकी जाने सकल, दर्शन श्रद्धा रूप;
चारित्रथी आवत रुके, तपस्या क्षपन सरूप. १२

कर्म रूप मलके शुधे, चेतन चांदी रूप;
निर्मल ज्योति प्रगट भयां, केवळज्ञान अनूप. १३

मूसी[३] पावक सोहगी, फुकांतनो उपाय;
राम चरण चारु मिल्या, मैल कनकको जाय. १४

कर्मरूप बादल मिटे, प्रगटे चेतन चंद;
ज्ञानरूप गुन चांदनी, निर्मळ ज्योति अमंद १५

राग द्वेष दो बीजसें, कर्मबंधकी व्याध;[४]
ज्ञानातम वैराग्यसें, पावे मुक्ति समाध.[५] १६

अवसर बीत्यो जात है, अपने वश[६] कछु होत;
पुण्य छतां पुण्य होत है, दीपक दीपकज्योत. १७

कल्पवृक्ष, चिंतामणि, इन भवमें सुखकार;
ज्ञानवृद्धि इनसे अधिक, भव-दुःखभंजनहार. १८

---

१ द्रव्य. २ वधी जाय. ३ सोनुं गाळवानी कुलडी. ४ व्याधि, रोग. [illegible] सुख ६ पोताना हाथमां अवसर होय त्यारे कंई बने छे.

ज्ञान गरीबी गुरुवचन, नरम वचन निर्दोष;
इनकुं कभी न छांडिये, श्रद्धा शील संतोष. २९
सत मत छोडो हो! नरा, लक्ष्मी चौगुनी होय;
सुख दुःख रेखा कर्मकी, टाली टले न कोय. ३०
गोधन गजधन रतनधन, कंचन खान सुखान;
जब आवे संतोषधन, सब धन धूळ समान. ३१
शील रतन महोटो रतन, सब रतनांकी खान;
तीन लोककी संपदा, रही शीलमें आन.[1] ३२
शीले सर्प न आभडे[2], शीले शीतल आग;
शीले अरि करि केसरी, भय जावे सब भाग. ३३
शील रतनके पारखुं, मीठा बोले बैन;
सब जगसें ऊंचा+ रहे नीचां राखे नैन. ३४
तनकर मनकर वचनकर, देत न काहु दुःख;
कर्म रोग पातिक जरे, देखत वाका मुख ३५

दोहा

पान खरंतां इम कहे, सुन तरुवर वनराय.
[3]अबके बिछुरे कब मिले, दूर पडेंगे जाय. १
तब तरुवर उत्तर दीयो, सुनो पत्र अेक बात;
इस घर अेही रीत है, अेक आवत अेक जात. २
[4]वरस दिनाकी गांठको, उत्सव गाय बजाय;
मूरख नर समजे नहीं, वरस गांठको जाय. ३

सोरठो

[5]पवन तणो विश्वास, किण कारण तें दृढ कियो?
इनकी अेही रीत, आवे के आवे नहीं. ४

१ आनि. २ अभडाय. + उदासीन ३ हमणां छूटां पडेलां क्यारे मळीशुं! [illegible] ५ वा, श्वासोश्वास.

चार कोश ग्रामांतरे, खरची बांधे लार;[3]
परभव निश्चय जावणो, करीअे धर्म विचार. १२

रज विरज ऊंची गई, नरमाइके पान;[4]
पत्थर ठोकर खात है, करडाईके तान.[5] १३

अवगुन उर धरीअे नहि, जो हुवे विरख बबूल;
गुन लीजे कालु कहे, नहि छायामें सूल. १४

जैसी जापे वस्तु है, वैसी दे दिखलाय;
वाका बूरा न मानीअे, कहां लेने वो जाय? १५

गुरु कारीगर सारिखा, टांकी वचन विचार;
पत्थरसे प्रतिमा करे, पूजा लहे अपार. १६

संतनकी सेवा कियां, प्रभु रीझत है आप;
जाका बाल खिलाइअे, ताका रीझत बाप. १७

भवसागर संसारमें, दिपा श्री जिनराज;
उद्यम करी प्होंचे तीरे, बेठी धर्मजहाज. १८

निज आतमकुं दमनकर, पर आतमकुं चीन;
परमातमकुं भजनकर, सोई मत परवीन. १९

समजु शंके[8] पापसें, अणसमजु हरखंत;
वे लूखां वे चीकणां, इणविध कर्म बधंत. २०

समज सार संसारमें, समजु टाले दोष;
समज समज करी जीवहीं, गया अनंता मोक्ष. २१

उपशम विषय कषायनो, संवर तीनुं योग;
क्रिरिया जतन विवेकसें, मिटे कर्म दुःखरोग. २२

---

३ साथे. ४ नम्रपणाथी. ५ तन्मयपणुं. ६ बाळनुं शुं.
गाफल वचन गण ८ डरे.

अज्ञानपणे. मिथ्यात्वपणे, अव्रतपणे, कषायपणे, अशुभ-योगे करी, प्रमादे करी अपछंद-अविनीतपणुं में कर्युं ते सर्वे मिच्छा मि दुक्कडं

श्री अरिहंत भगवंत वीतराग केवलज्ञानी महाराजनी, श्री गणधरदेवनी, श्री आचार्यनी, श्री धर्माचार्यनी, श्री उपाध्यायनी अने श्री साधु-साध्वीनी, श्रावकश्राविकानी, समदृष्टि-साधर्मी उत्तम पुरुषोनी, शास्त्रसूत्रपाठनी, अर्थपरमार्थनी धर्म संबंधी, अने सकल पदार्थोनी अविनय, अभक्ति, आशातनादिक करी, करावी अनुमोदी; मन, वचन अने कायाअे करी द्रव्यथी, क्षेत्रथी, कालथी अने भावथी सम्यक् प्रकारे विनय, भक्ति, आराधना, पालन, स्पर्शना, सेवनादिक यथायोग्य अनुक्रमे नहीं करो, नहीं करावी, नहीं अनुमोदी, ते मने धिक्कार, धिक्कार; वारंवार मिच्छा मि दुक्कडं. मारी भूलचूक, अवगुण, अपराध सर्वे माफ करो, क्षमा करो; हुं मन, वचन कायाअे करी खमावुं छुं.

दोहा

अपराधी गुरु देवको, तीन भुवनको चोर;
ठगुं विराणा मालमें, हा हा कर्म कठोर.
कामी कपटी लालची, उपछंदा अविनीत,
अविवेकी क्रोधी कठिन, महापापी भयभीत.
जे में जीव विराधिया, सेव्यां पाप अढार;
नाथ तुमारी साखसें वारंवार धिक्कार.

पहेलुं पाप-प्राणातिपात :—

छकायपणे में छकाय जीवनी विराधना करी; पृथ्वीकाय, अपकाय, तेउकाय, वायुकाय, वनस्पतिकाय, बेइंद्रिय. तेइंद्रिय चौरेंद्रिय, पंचेंद्रिय, संज्ञी, असंज्ञी,

धन्य हशे के जे दिवसे हुं सर्वथा प्रकारे मृषावादनो त्याग करीश. ते दिवस मारो परम कल्याणमय थशे.

त्रीजुं पाप अदत्तादान :—

अणदीधी वस्तु चोरी करीने लीधी, विश्वासघात करी थापण ओळवी, परस्त्री, परधन हरण कर्यां ते मोटी चोरी लौकिक विरुद्धनी, तथा अल्प चोरी ते घर संबंधी नाना प्रकारना कर्तव्योमां उपयोग सहिते ने उपयोग रहिते चोरी करी, करावी, करता प्रत्ये अनुमोदी, मन-वचन कायाअे करी; तथा धर्म संबंधी ज्ञान, दर्शन, चारित्र अने तप श्री भगवंत गुरुदेवोनी आज्ञा वगर कर्यां ते मने धिक्कार, धिक्कार, वारंवार मिच्छा मि दुक्कडं, ते दिवस मारो धन्य हशे के जे दिवसे हुं सर्वथा प्रकारे अदत्तादाननो त्याग करीश ते मारो परम कल्याणमय दिन थशे.

चोथुं पाप अब्रह्म :—

मैथुन सेववामां मन. वचन अने कायाना योग प्रवर्त्ता नव वाड सहित ब्रह्मचर्य पाळ्युं नहि; नव वाडमां अ॰ ॰ प्रवृत्ति करी; पोते सेव्युं, बीजा पासे सेवराव्युं, सेव प्रत्ये भलुं जाण्युं, ते मन, वचन कायाअे करी मने धिक्कार वारंवार मिच्छा मि दुक्कडं. ते दिवस मारो धन्य के जे दिवसे हुं नववाड सहित ब्रह्मचर्य-शीलरत्न सर्वथा प्रकारे कामविकारोथी निवर्तीश. ते दिवस परम कल्याणमय थशे.

पांचमुं परिग्रह पापस्थानक :—

सचित परिग्रह ते दास, दासी, द्विपद, मणि. पत्थर आदि अनेक प्रकारे छे अने

अग्यारमुं द्वेष पापस्थानक :—

अणगमती वस्तु जोइ द्वेष कर्यो, ते मने धिक्कार, धिक्कार, वारंवार मिच्छा मि दुक्कडं.

बारमुं कलह पापस्थानक :—

अप्रशस्त वचन बोली कलेश उपजाव्या, ते मने धिक्कार, धिक्कार, वारंवार मिच्छा मि दुक्कडं.

तेरमुं अभ्याख्यान पापस्थानक :—

अछतां आल दीधां, ते मने धिक्कार, धिक्कार, वारंवार मिच्छा मि दुक्कडं.

चौदमुं पैशून्य पापस्थानक :—

परनी चुगली, चाडी करी, ते मने धिक्कार, धिक्कार, वारंवार मिच्छा मि दुक्कडं.

पंदरमुं परपरिवाद पापस्थानक :—

बीजाना अवगुण, अवर्णवाद बोल्यो, बोलाव्या, अनुमोद्या, ते मने धिक्कार. धिक्कार, वारंवार मिच्छा मि दुक्कडं

सोळमुं रति अरति पापस्थानक :—

पांच इंद्रियना २३ विषयो, २४० विकारो छे तेमां मनगमतामां राग कर्यो, अणगमतामां द्वेष कर्यो, संयम तप आदिमां अरति करी करावी अनुमोदी तथा आरंभादि असंयम प्रमादमां रतिभाव कर्यो, कराव्यो, अनुमोद्यो, ते मने धिक्कार धिक्कार, वारंवार मिच्छा मि दुक्कडं.

सत्तरमुं मायामृषावाद पापस्थानक :—

कपटसहित जूठुं बोल्यो, ते मने धिक्कार, धिक्कार, वारंवार मिच्छा मि दुक्कडं.

साठ कर्मादानना पंदर संलेखनानः पांच, अेवं नव्वाणुं अतिचारमां तथा १२४ अतिचार मध्ये तथा साधुना १२५ अतिचार मध्ये तथा बावन अनाचरणना श्रद्धादिकमां विराधनादि जे कोइ अतिक्रम, व्यतिक्रम, अतिचारादि सेव्या सेवराव्या, अनुमोद्या जाणतां अजाणतां मन वचन, कायाअे करी ते मने धिक्कार, धिक्कार, वारंवार मिच्छा मि दुक्कडं.

में जीवने अजीव सद्दह्या, प्ररूप्या; अजीवने जीव सद्दह्या प्ररूप्याः धर्मने अधर्म अने अधर्मने धर्म सद्दह्या, प्ररुप्या, साधुने असाधु अने असाधुने साधु सद्दह्या प्ररूप्या तथा उत्तम पुरुप, साधु, मुनिराज साध्वीजीनी सेवा भक्ति यथाविधि मानतादि नहि करी, नहि करावी, नहि अनुमोदी; तथा असाधुओनी सेवा भक्ति आदि मानता पक्ष कर्यो; मुक्तिना मार्गमां संसारनो मार्ग यावत् पचीस मिथ्यात्वमांनां मिथ्यात्व सेव्यां, सेवराव्यां, अनुमोद्यां, मने करी, वचने करी, कायाअे करी; पचीस कषाय संबंधी, पचीस क्रिया संबंधी, तेत्रीश आशातना संबंधी, ध्यानना ओगणीस दोष-वंदनाना बत्रीस दोष-सामायिकना बत्रीस दोष, पोसहना अढार दोष संबंधी मने, वचने, कायाअे करी जे कांइ पाप दोष लाग्या, लगाव्या, अनुमोद्या, ते मने धिक्कार, धिक्कार, वारंवार मिच्छा मि दुक्कडं.

महामोहनीय कर्मबंधनां त्रीशस्थानकने मन, वचन, कायाअे करी सेव्यां, सेवराव्यां, अनुमोद्यां, शीलनी नव वाड, आठ प्रवचन मातानी विराधनादिक तथा श्रावकना अेकवीश गुण अने बार व्रतनी विराधनादि मन, वचन अने कायाअे करी, करावी, अनुमोदी तथा त्रण अशुभ लेश्यानां लक्षणोनी अने

हे जिनेश्वर वीतराग ! आपनी आज्ञा आराधवामां जे जे प्रमाद कर्यो, सम्यक्प्रकारे उद्यम नहि कर्यो, नहि कराव्यो, नहि अनुमोद्यो, मन, वचन, कायाओ करी अथवा अनाज्ञा विषे उद्यम कर्यो, कराव्यो, अनुमोद्यो, अेक अक्षरना अनंतमा भाग मात्र-कोई स्वप्नमात्रमां पण आपनी आज्ञाथी न्यून-अधिक, विपरीतपणे प्रवर्त्यो, ते मने धिक्कार, धिक्कार, वारंवार मिच्छा मि दुक्कडं.

ते मारो दिवस धन्य हशे के जे दिवसे हुं आपनी आज्ञामां सर्वथा प्रकारे सम्यक्पणे प्रवर्तीश.

दोहा.

श्रद्धा अशुद्ध प्ररूपणा. करी फरसना सोय;
अनजाने पक्षपातमें मिच्छा दुक्कड मोय.
सूत्र अर्थ जानुं नहि अल्पबुद्धि अनजान;
जिनभाषित सब शास्त्रका अर्थ पाठ परमान.
देवगुरु धर्म सूत्रकुं, नव तत्त्वादिक जोय;
अधिका ओछा जे कह्या, मिच्छा दुक्कड मोय
हुं मगसेलीओ हो रह्यो, नहीं ज्ञान रसभीज;
गुरुसेवा न करी शकुं, किम मुज कारज सीझ.
जाने देखे जे सुने, देवे सेवे मोय;
अपराधी उन सबनको बदला देशुं सोय
जैन धर्म शुद्ध पायके, वरतुं विषय कषाय;
अेह अचंबा हो रह्या, जलमें लागी लाय.
अेक कनक अरु कामिनी, दो मोटी तरवार;
उठ्यो थो जिन भजनकुं, बिचमें लियो मार.

पुत्र कुपात्र ज मैं हुओ, अवगुण भर्यो अनंत;
याहित वृद्ध विचारके, माफ करो भगवंत.

शासनपति वर्द्धमानजी, तुम लग मेरी दोड;
[२]जैसे समुद्र जहाज विण, सूजत और न ठोर.

भवभ्रमण संसार दुःख, ताका वार न पार;
निर्लोभी सद्गुरु विना, कवण उतारे पार.

श्री पंचपरमेष्ठी भगवंत गुरुदेव महाराज आपनी सम्यक्ज्ञान, सम्यक्दर्शन, सम्यक्चारित्र, तप, संयम, संवर, निर्जरा आदि मुक्तिमार्ग यथाशक्तिअे शुद्ध उपयोग सहित आराधना पालन स्पर्शन करवानी आज्ञा छे वारंवार शुभ उपयोग संबंधी सज्झाय ध्यानादिक अभिग्रह-नियम पच्चखाणादि करवा, करावववानी, समिति-गुप्ति आदि सर्व प्रकारे आज्ञा छे.

निश्चे चित शुद्ध मुख पढत, तीन योग थिर थाय;
दुर्लभ दीसे कायरा, हलु कर्मी चित भाय.
अक्षर पद हीणो अधिक, भूलचूक कही होय;
अरिहा सिद्ध निज साखसें, मिच्छा दुक्कड मोय.

भूलचूक मिच्छा मि दुक्कडं

बृहद् आलोचना समाप्त.

---

२ समुद्रना वहाणना पक्षीने बीजे उडीने जवानुं स्थळ नथी तेम.

सव्वसमाहिवत्तियागारेणं, पाणस्स लेवेण वा, अलेवेण वा, अच्छेण वा, बहुलेवेण वा, ससिथ्थेण वा असिथ्थेण वा वोसिरे.

(३) तिविहार उपवासनुं पच्चक्खाण

सूरे उग्गए अब्भत्तट्ठं पच्चक्खाइ; तिविहंपि आहारं असणं, खाईमं, साईमं; अन्नथ्थणाभोगेणं, सहसागारेणं, पारिट्ठावणियागारेणं, महत्तरागारेणं, सव्वसमाहिवत्तियागारेणं, पाणहार पोरिसिं, साढपोरिसिं, मुट्ठिसहिअं, पच्चक्खाई; अन्नथ्थणाभोगेणं, सहसागारेणं, पच्छन्नकालेणं, दिसामोहेणं, साहुवयणेणं, महत्तरागारेणं, सव्वसमाहिवत्तियागारेणं, पाणस्स लेवेण वा, अलेवेण वा, अच्छेण वा, बहुलेवेण वा, ससिथ्थेण वा, असिथ्थेण वा, वोसिरे.

(४) चउविहार उपवासनुं पच्चक्खाण.

सूरे उग्गए अब्भत्तट्ठं पच्चक्खाई; चउव्विहंपि आहारं–असणं, पाणं, खाईमं, साईमं; अन्नथ्थणाभोगेणं सहसागारेणं. पारिट्ठावणियागारेणं, महत्तरागारेणं, सव्वसमाहिवत्तियागारेणं वोसिरे.

(५) पाणाहारनुं पच्चक्खाण.

पाणहार दिवसचरिमं पच्चक्खाई, अन्नथ्थणाभोगेणं, सहसागारेणं, महत्तरागारेणं, सव्वसमाहिवत्तियागारेणं वोसिरे.

(६) चउविहारनुं पच्चक्खाण.

दिवसचरिमं पच्चक्खाई, चउव्विहंपि आहारं–असणं, पाणं खाईमं, साईमं, अन्नथ्थणाभोगेणं, सहसागारेणं, महत्तरागारेणं, सव्वसमाहिवत्तियागारेणं वोसिरे.

को विस्मयोऽत्र यदि नामगुणैरशेषैः
त्वं संश्रितो निरवकाशतया मुनीशः
दोषैरुपात्त विविधाश्रयजातगर्वैः
स्वप्नान्तरेऽपि न कदाचिदपीक्षितोऽसि. ६

श्रेयःश्रियां मंगलकेलिसद्म, नरेन्द्रदेवेन्द्रनतांघ्रिपद्म;
सर्वज्ञ सर्वातिशयप्रधान. चिरं जय ज्ञानकलानिधान. ७

जगत्रयाधार कृपावतार. दुर्वार संसार विकार वैद्य;
श्री वीतराग त्वयि मुग्धभावाद् , विज्ञ प्रभो विज्ञपयामि किंचित्. ८

सरसशांतिसुधारससागरं.
शुचितरं गुणरत्नमहागरम्;
भविकपंकजबोधिदिवाकरं,
प्रतिदिनं प्रणमामि जिनेश्वरम्. ९

श्री सहजात्म स्वरूप सदोदित श्री शुद्ध चैतन्य स्वामीजी;
जिनका वचनामृत पानसें सहज समाधि पामीजी;
जिनका हृदयदर्शने हृदयकी विषम वृत्ति विरामीजी,
ते श्री परमकृपाळु सद्गुरु राज नमुं शिर नामीजी. १०

अनंतानंत संसार-संततिच्छेदकारणं;
(गुरुराज) जिनराज पदांभोजस्मरणं शरणं मम ११

परिपूर्ण ज्ञाने परिपूर्ण ध्याने,
परिपूर्ण चारित्र बोधित्व दाने;
निरागी महा शांत मूर्ति तमारी.
प्रभु प्रार्थना शांति (राज) लेशो अमारी. १२

पुत्र कुपात्र ज मैं हुओ, अवगुण भर्यो अनंत;
याहित वृद्ध विचारके, माफ करो भगवंत.

शासनपति वर्द्धमानजी, तुम लग मेरी दोड;
[२]जैसे समुद्र जहाज विण, सूजत और न ठोर.

भवभ्रमण संसार दुःख, ताका वार न पार;
निर्लोभी सद्गुरु विना, कवण उतारे पार.

श्री पंचपरमेष्ठी भगवंत गुरुदेव महाराज आपनी सम्यक्ज्ञान, सम्यक्दर्शन, सम्यक्चारित्र, तप, संयम, संवर, निर्जरा आदि मुक्तिमार्ग यथाशक्तिअे शुद्ध उपयोग सहित आराधना पालन स्पर्शन करवानी आज्ञा छे वारंवार शुभ उपयोग संबंधी सज्झाय ध्यानादिक अभिग्रह-नियम पच्चखाणादि करवा, करावबानी, समिति-गुप्ति आदि सर्व प्रकारे आज्ञा छे.

निश्चे चित शुद्ध मुख पढत, तीन योग थिर थाय;
दुर्लभ दीसे कायरा, हलु कर्मी चित भाय.
अक्षर पद हीणो अधिक, भूलचूक कही होय;
अरिहा सिद्ध निज साखसें, मिच्छा दुक्कड मोय.

भूलचूक मिच्छा मि दुक्कडं

बृहद् आलोचना समाप्त.

---

२ समुद्रना वहाणना पक्षीने बीजे उडीने जवानुं स्थळ नथी तेम.

सव्वसमाहिवत्तियागारेणं, पाणस्स लेवेण वा, अलेवेण वा, अच्छेण वा, बहुलेवेण वा, ससिथ्थेण वा असिथ्थेण वा वोसिरे.

(३) तिविहार उपवासनुं पच्चक्खाण

सूरे उग्गए अब्भत्तट्ठं पच्चक्खाइ; तिविहंपि आहारं असणं, खाईमं, साईमं; अन्नथ्थणाभोगेणं, सहसागारेणं, पारिट्ठावणियागारेणं, महत्तरागारेणं, सव्वसमाहिवत्तियागारेणं, पाणहार पोरिसि, साढपोरिसि, मुट्ठिसहिअं, पच्चक्खाई; अन्नथ्थणाभोगेणं, सहसागारेणं, पच्छन्नकालेणं, दिसामोहेणं, साहुवयणेणं, महत्तरागारेणं, सव्वसमाहिवत्तियागारेणं, पाणस्स लेवेण वा, अलेवेण वा, अच्छेण वा, बहुलेवेण वा, ससिथ्थेण वा, असिथ्थेण वा, वोसिरे.

(४) चउविहार उपवासनुं पच्चक्खाण.

सूरे उग्गए अब्भत्तट्ठं पच्चक्खाई; चउव्विहंपि आहारं-असणं, पाणं, खाईमं, साईमं; अन्नथ्थणाभोगेणं सहसागारेणं. पारिट्ठावणियागारेणं, महत्तरागारेणं, सव्वसमाहिवत्तियागारेणं वोसिरे.

(५) पाणाहारनुं पच्चक्खाण.

पाणहार दिवसचरिमं पच्चक्खाई, अन्नथ्थणाभोगेणं, सहसागारेणं, महत्तरागारेणं, सव्वसमाहिवत्तियागारेणं वोसिरे.

(६) चउविहारनुं पच्चक्खाण.

दिवसचरिमं पच्चक्खाई, चउव्विहंपि आहारं-असणं, पाणं खाईमं, साईमं, अन्नथ्थणाभोगेणं, सहसागारेणं. महत्तरागारेणं, सव्वसमाहिवत्तियागारेणं वोसिरे.

सव्वसमाहिवत्तियागारेणं, पाणस्स लेवेण वा, अलेवेण वा, अच्छेण वा, बहुलेवेण वा, ससित्थेण वा असित्थेण वा वोसिरे.

(३) तिविहार उपवासनुं पच्चक्खाण

सूरे उग्गअे अब्भत्तट्ठं पच्चक्खाइ; तिविहंपि आहारं असणं, खाईमं, साईमं; अन्नथ्थणाभोगेणं, सहसागारेणं, पारिठ्ठावणियागारेणं, महत्तरागारेणं, सव्वसमाहिवत्तियागारेणं पाणहार पोरिसिं, साढपोरिसिं, मुठ्ठिसहिअं, पच्चक्खाई अन्नथ्थणाभोगेणं, सहसागारेणं, पच्छन्नकालेणं, दिसामोहेणं साहुवयणेणं, महत्तरागारेणं, सव्वसमाहिवत्तियागारेणं, पाणस्स लेवेण वा, अलेवेण वा, अच्छेण वा, बहुलेवेण वा, ससित्थेण वा, असित्थेण वा, वोसिरे.

(४) चउविहार उपवासनुं पच्चक्खाण.

सूरे उग्गअे अब्भत्तट्ठं पच्चक्खाई; चउव्विहंपि आहारं-असणं, पाणं, खाईमं, साईमं; अन्नथ्थणाभोगेणं सहसागारेणं. पारिठ्ठावणियागारेणं, महत्तरागारेणं, सव्वसमाहिवत्तियागारेणं वोसिरे.

(५) पाणाहारनुं पच्चक्खाण.

पाणहार दिवसचरिमं पच्चक्खाई, अन्नथ्थणाभोगेणं, सहसागारेणं, महत्तरागारेणं, सव्वसमाहिवत्तियागारेणं वोसिरे.

(६) चउविहारनुं पच्चक्खाण.

दिवसचरिमं पच्चक्खाई, चउव्विहंपि आहारं-असणं, पाणं खाईमं, साईमं, अन्नथ्थणाभोगेणं, सहसागारेणं. महत्तरागारेणं, सव्वसमाहिवत्तियागारेणं वोसिरे.

को विस्मयोऽत्र यदि नामगुणैरशेषैः
त्वं संश्रितो निरवकाशतया मुनीशः
दोषैरुपात्त विविधाश्रयजातगर्वैः
स्वप्नान्तरेऽपि न कदाचिदपीक्षितोऽसि. ६

श्रेयःश्रियां मंगलकेलिसद्म, नरेन्द्रदेवेन्द्रनतांघ्रिपद्म;
सर्वज्ञ सर्वातिशयप्रधान. चिरं जय ज्ञानकलानिधान. ७

जगत्रयाधार कृपावतार. दुर्वार संसार विकार वैद्य;
श्री वीतराग त्वयि मुग्धभावाद् , विज्ञ प्रभो विज्ञपयामि किंचित्. ८

सरसशांतिसुधारससागरं.
शुचितरं गुणरत्नमहागरम्;
भविकपंकजबोधिदिवाकरं,
प्रतिदिनं प्रणमामि जिनेश्वरम् . ९

श्री सहजात्म स्वरूप सदोदित श्री शुद्ध चैतन्य स्वामीजी;
जिनका वचनामृत पानसें सहज समाधि पामीजी;
जिनका हृदयदर्शने हृदयकी विषम वृत्ति विरामीजी,
ते श्री परमकृपाळु सद्गुरु राज नमुं शिर नामीजी. १०

अनंतानंत संसार-संततिच्छेदकारणं;
(गुरुराज) जिनराज पदांभोजस्मरणं शरणं मम ११

परिपूर्ण ज्ञाने परिपूर्ण ध्याने,
परिपूर्ण चारित्र बोधित्व दाने;
निरागी महा शांत मूर्ति तमारी.
प्रभु प्रार्थना शांति (राज) लेशो अमारी. १२